

हरी बाँसुरी सुनहरी टेर

†
सुमित्रानन्दन पंत



राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली

भकार

प्रति	१
उच्छ्वास	२४
धौधू	३४
स्मृति	४१
नाबी पत्नी के प्रति	४६
प्रतीक्षा	५१
स्मिधि	५२
गीत कमल	५३
मन बिह्व	५४
प्रेम लीक	५६
गृह काज	५७
मधुवन	५८
कप तारा	६६
गीत	६८
लहरों का गीत	७१
हवा के झकोरों का गीत	७२
धाम बन	७४
विजय बाटी	७६

प्राप्त पुस्तकी	७७
रेखाचित्र	८१
स्त्री	८३
मातृ	८४
अनुष्ठिता	८६
स्वप्न घटी	८८
गारी कम	८९
मर्म कथा	९१
प्रथम कुंज	९३
धरत बाहली	९८
ममै व्यथा	९९
नोपन	१००
स्वप्न बंधन	१०१
स्वप्न शिष्टी	१०३
हृदय ठारण्य	१०५
मालिनी	१०६
स्मृति	११४
मनु गीत	११६
मातृ स्मृति	११८
स्मृति पीठ	१४
मातृ रूप	१४२
मनोमय	१४४
पुनर्मुखांकन	१४६

जब जीवन के स्रोत सम्मिलित
हो जाते हैं किसी प्रकार,
तब नही तब बिलुप्त सकता
सब, स्वयं तारक करतार ।

प्रथि

वह मधुर मधुमास था, जब गंध से
 मुग्ध होकर झूमते थे मधुप वन
 रसिक पिक से सरस तरुण रसाल थे,
 प्रवृत्ति के सुल बड़ रहे थे दिवस-से।
 जानकर ऋतुराज का भव भागमन
 प्रसिद्ध कोमल कामनाएँ प्रवृत्ति की
 खिल उठी थीं मुदुल सुमनों में कई
 सफल होने की प्रवृत्ति के इस से।

अस्तमित निज बनक किरणों को तपन
 भरम गिरि को सींचता था कृपण सा
 प्रवृत्ति प्रभा में रंगा था वह पवन
 रजकणों से वासनाओं से विपुल।
 तरुण के ही सग तरल तरंग से
 तरुण कूभी थी हयारी ताल में
 संधि निःस्वप्न-से गहन अम गर्म में
 था हमारा विश्व तन्मय हो गया।

इसे धीमे धीमे देखें

बुदबुदे जिन अपस सहरों में प्रथम
गा रहे थे राग भीमन का अधिर
अल्प पल उनके प्रबल उत्थान में
हृदय की सहरें हमारी सो गई !

×

×

×

जब विमुछित मीढ़ से मैं था जगा
(कौन जाने किस तरह ?) पीयूष सा
एक कोमल समव्यथित निश्वास था
पुनर्जीवन सा मुझे तब दे रहा !
शीघ्र रक्त मेरा सुकोमल जाँघ पर
शशि कला सी एक बासा व्यथ हो
देसती थी म्लान मुख मेरा अचल
सदय भीरु अधीर, चिन्तित दृष्टि से !

इदु पर, उस हँसु मुख पर साज ही
थे पड़े मेरे नयन जो लवय से,
साज से रक्षित हुए थे —पूर्व को
पूज था पर वह द्वितीय अपूर्व था !
बास रजनी सी अलक थी डोलती
अमित हो शशि क वदन के बीच में
अचल रेखांकित कभी थी कर रही
प्रमुखता मुख की सूछवि के काव्य में !

एक पल मेरे प्रिया के दृग पलक
थे उठे ऊपर, सहज नीचे मिरे,

हरी बाँसुरी सुनहरी टेर

जपलता ने इस विकंपित पुलक से
 दृढ़ किया मानो प्रणय सबध था।
 साव की मादक सुरा सी सासिमा
 फस गालों में, नवीन गुलाब-से,
 छलकती थी बाढ़ सी सौन्दर्य की
 अवशुले सस्मित गर्कों से सीप-से !

(इन गर्कों में—रूप के आवत-से—
 धूम फिर कर, नाव-से किसके नयन
 हैं नहीं डूबे मटक कर, घटक कर,
 मार से दब कर तरुण सौन्दर्य के ?)
 घुमग सगता है गुलाब सहज सदा,
 क्या उपाभय का पुन कहना मला ?
 सासिमा ही से नहीं क्या टपकती
 सेव की चिर सरसता सुकुमारता ?
 पद ननों को गिन समय के मार को
 जो घटाती थी मुलाकर, अवनिवस
 खुरप कर, वह बड़ पलों की घुटता
 थी वहाँ मानो छिपाना चाहती !

×

×

×

हृदु की छवि में, तिमिर के गर्भ में,
 अनिस की ध्वनि में सलिस की दीप्ति में
 एक उत्सुकता विचरती थी, सरस
 सुमन की स्मिति में, सता के भ्रमर में !

याव है मुझको अभी वह बड़ समय
 व्याह के दिन जब विकल दुर्बल हृदय
 अशुओं से तारकों को बिजन में
 गिन रहा था, व्यस्त हो, उद्भात हो !

हाम रे मानव हृदय ! तुमसे जहाँ
 क्षण भी भयभीत होता है वहीं
 देख तेरी मृदुलता तिम सुमन नी
 सकृद्वि हो सहम जाता है सदा !
 ग्रंथि बंधन !—इस सुनहरी ग्रंथि में
 स्वर्ग की ओ' विषय की मंगलसयी
 जो अनोखी चाह जो उन्मत्त बन
 है छिपा वह एक है, अनमोल है !

शैबनिनि ! जाओ, मिला तुम सिंधु से,
 अनिस ! आसिगन करो तुम यगन को
 बंधिके ! श्रुमो तरंगों के अधर
 * उदमगो ! गाओ पवन-बीजा वजा !
 पर, हृदय ! सज्ज माँति तू कंगाल है,
 उठ किसी निर्जन विपिन में बैठ कर
 अशुओं की बाढ़ में अपनी विकी
 मग्न भावी को बुवा दे धाँस-सी !
 देख रोता है अकोर हृदय, जहाँ
 तरसता है तृपित आतक बारि को,

हरी बाणुरी सुनहरी टेर

बहु, मधुप बिध कर तड़पता है यही
नियम है ससार का रो हृदय, रो !

×

×

×

छि' सरस सौन्दर्य ! तुम सचमुच धके
निठुर धो' नादान हो ! सुकुमार, यों
पलक दल में तारकों में, घघर में
खेल कर तुम कर रहे हो हाय ! क्या ?
जानते हो क्या ? सुकोमल गाल पर
कुल भ्रूगुलियों पर कटी कटि पर छिपे
तुम मिथौगी खेल कर कितना गहन
भाव करते हो सुमन-से हृदय में !

धो' धकेले चिबुक तिल से कुछ उठी
कुछ गिरी भ्रू नीचि से कुछ-कुछ बुनी
नयनछा से कुछ दकी मुसकान से
छीनते किस भाँति हो तुम धर्य को ?
मुकुल के भीतर उपा की रश्मि से
जम्म पा मधु की मधुरता धूसि की
मुधुलता, कटु कटकों की प्रसरता,
मुग्धता सी मधुप की तुमने चुरा !

धीर, भासे प्रेम ! क्या तुम हो बने
वेदना के विकल हाथों से ? जहाँ
भूमते गज-से विपरते हो, वहीं
आह है उम्माह है उस्ताप है !

वेदना !—कैसा कदण उध्गार है !
 वेदना ही है अखिल ब्रह्मांड यह
 तुहिन में तूण में, उपस में, सहर में
 सारकों में, व्योम में है वेदना !
 वेदना !—किन्तु विश्व यह रूप है !
 यह भीरे ध्रुव की दीपक शिखा !
 रूप की अंतिम छटा ! इस विश्व की
 अगम अरम अविधि कित्ति की परिधि सी !

कौन दोषी है ? यही तो म्याय है !
 वह मधुप बिच कर उड़पता है उधर
 दग्ध जातक तरसता है—विश्व का
 नियम है यह रो अभाग हृदय रो ! !

× × ×
 कौन वह बिछूने दिलों की दुर्वशा
 पोंछ सकता है ? दुर्गों की जाड़ में
 विकल बिहारे बुलबुलों की बुझती
 मौन आहें हाय ! कौन समझ सका !
 सूम्य जीवन के अकेले पृष्ठ पर
 बिरह !—अहह कराहते इस शब्द को
 किन्तु कुलिश की तीक्ष्ण चुभती नोक से
 निटुर विधि ने अभुओं से है मिला ! !

× × ×
 प्रेम बचिठ को तथा कंगाल को
 है कहीं धामय ! बिरह की अग्नि में

हरी बाँसुरी पुनहरी टेर

भस्म होकर हृदय की दुष्म दशा
 हो गई परिणत विरति सी शक्ति में !
 सुहृद्घर ! कगास कृष कंकास सा,
 भैरवी से भी सुरीला है भहा !
 किस गहनता के अंधर से फूट कर
 फैलते हैं शून्य स्वर इसके सदा !

आज मैं कंकास हूँ—क्या यह प्रथम
 आज मैंने ही कहा ? जो हृदय ! तुम
 वह रहे हो मुक्त इसके मोद में
 भूल कर दुर्वेष के गुह भाग को !
 मैं अकेला विपिन में बठा हृषा
 सींचता हूँ विजयता से हृदय को,
 और उसकी भेदती कृष दृष्टि से
 खूँझता हूँ विषय के उग्माद को !

विषय,—यह कैसी मनोहर भूल है !
 मधुर दुर्वसता !—कई छोटी बड़ी
 अस्पृष्टार्थ जोड़, सीसा के लिए,
 यह निराशा खेल क्या विधि ने रचा ?
 कौन सी ऐसी परम वह वस्तु है
 मटकते हैं ममज-गण जिसके लिए ?
 कौन सा ऐसा धरम सौम्यर्ष है
 सींचता है जो जगत के हृदय को ?

सुमन दल में फूट पागल-सी, पश्चिम
 प्रणय की स्मृति हंस रही है, मुकुल में
 वास है अशांत मायी कर रही
 आज मेरी औपवी सी परवशा !

गर्ब-सा गिर उब्ध निर्भर सात से
 स्वप्न सुख मेरा शिलामय हृदय में
 धोप भीषण कर रहा है बख सा,
 बात सा, मूढम्प सा उत्पात सा !
 तारकों के अचल पलकों से विपुल
 मौन विस्मय छीन कर मेरा पतन
 निर्निमेष विलोकता है विश्व की
 भीस्ता को चन्द्रमा की ज्योति में !

तिमिर के अज्ञात अंश में छिपी
 झूमती है आन्ति मेरी अमर सी
 चन्द्रिका की लहर में है खोजती
 मग्न आशा आज छत छत लड़ हो !
 तिमिर ! — यह क्या विश्व का उन्माद है,
 जो छिपाता है प्रकृति के रूप को ?
 या किसी की यह विनीत आह है
 खोजती है जो प्रलय की राह को !

या किसी के प्रेम वंचित पलक की
 मुक ढकता है ? पवन में विभर कर,

पूछती है जो सितारों से सतत—
 प्रिय ! तुम्हारी नींव किसमे छीन सी ?
 यह किसी के खन का सूझा हुआ
 सिन्धु है क्या ? जो दुर्गों की भाड़ में
 सृष्टि की सत्ता डुबाने के लिए
 समझता है एक नीरब सहर में ।

आह, यह किसका धँधेरा माम्य है ?
 प्रलय छाया सा अनन्त विपाद सा !
 कौन मेरे कल्पना के विपिन में
 पागलों सा यह धमय है धूमता ?
 हृदय ! यह क्या दग्ध तेरा चित्र है ?
 धूम ही है शेष जब जिसमें रहा !
 इस पवित्र दुकूल से तू देव का
 जवन डेकने के लिए क्यों व्यग्र है ।

उच्छ्वास
(साधन भादो)
(साधन)

सिंघकते, अस्थिर मानस से

बास-बावस-सा उठकर धाव

सरस, अस्फुट उच्छ्वास !

अपने छाया के पक्षों में

(नीरव-शोष भरे वृक्षों में)

मेरे बाँसू गूँथ, फँस गमीर-मेव-सा

धाँछावित कर से सारा आकाश !

यह अमृत्य मोती का साव

इन मृगधर्ममय, सरस परो में

(पृथ्वि-स्वभाव से भरे सरो में)

तुम्हको पहना जगत देख ले—यह स्वर्गीय प्रकाश !

मंद विद्युत-सा हँसकर

वज्र-सा उर में चँसकर

धरज गगन के मान ! गरज गमीर स्वरो में

भर अपना संविष्ट सरो में धी भवरो में

है भाँक रहे नीरव नम्र पर
अनिमेष, अटस, कुछ चिन्तापर ।

—उड़ गया, अधानक सो, भूवर
फड़का अपार बारिद के पर ।
रव-शेष रह गए हैं मिर्मर,
है टूट पड़ा भू पर अम्बर !

बैस गए धरा में समय क्षास !
उठ रहा भूमा जस गया तास !
—यों जलद-यान में विषर, विषर,
था इन्द्र सेमता इन्द्रवास !

(वह सरसा उस गिरि को कहती थी बाइस-घर !)

इस तरह मेरे चितेरे-हृदय की
बाह्य-व्रकृति बनी जमस्तु-चिपची
सरस-शैल्य की सुसद-सुधि-सी वही
वासिका मेरी मनोरम-मित्र थी ।

(भारी)

पीप के बचे बिकास ।

अमिल-सा शोक में,
हृद में धीर शोक में,
कहाँ नहीं है स्नेह ? सौंस-सा सबके उर में !

हरी बाँसुरी धुनहरी टेर

स्वन, श्रैङ्गन, भार्मिगन,
 गरण, सेवन, भारावन,
 शशि की-सी ये कलित-कसाएँ किसक रही है पुर-पुर में ।

यही तो है बचपन का हास,
 बिसे-योवम का मधुप विनास,
 प्रौढता का वह बुद्धि-विकाश
 जरा का अन्तर्मेयन-प्रकाश ।
 ज-मदिल का है यही हुसास,
 मृत्यु का यही दीर्घ-नि-दवास !

है यह वैदिक-वाच
 विषय का सुख-युक्तमय उन्माद
 एकतामय है इसका भाव —

गिरा हो जाती है धनयन,
 नयन करते नीरव-भाषण
 श्रवण तक भा जाता है मन
 स्वयं मन करता बात श्रवण ।

अधुनों में रहता है हास,
 हास में अधुनों का भास,
 दवास में छिपा हुआ उन्माद,
 और उन्मादों ही में दवास ।

दोहे हैं जीवन-सार
 सब में छिपी हुई है यह अकार ।

हैं झींक रहे भीरव नम पर
अमिमेप, अटस, कुछ निम्तापर !

—उड़ गया, अचानक लो मूषक
फड़का अपार बारिद के पर !
रव-खेप रहे गए हैं निर्भर,
हैं टूट पड़ा भू पर अम्बर !

बैस गए धरा में समय सात !
उठ रहा बुधा, जस गया तास !
—यों असद-यात्र में बिचर, बिचर,
या इन्द्र खेसता इन्द्रबास !

(वह सरला उस गिरि को कहती थी दादस घर !)

इस तरह मेरे चितेरे-हृदय की
बाह्य प्रकृति बनी अमलकृत चित्र थी
सरस-शैशव की सुन्दर-सुनि-सी बही
बासिका मेरी मनोरम मित्र थी ।

(धारों)

धीप के बचे-बिकास !

अनिम-सा सोक में,
हृद में भीर सोक में
कहीं नहीं है स्नेह ? साँस-सा सबके उर में !

हरी बाँसुरी सुनहरी टेर

खन श्रीइन, भासिगन
भरण, सेवन धाराधन
क्षति की-सी ये कसित-कसाएँ किसक रही है पुर-पुर में।

यही तो है बचपन का हास
सिसे-सीबन का मधुप-बिसास
प्रौढ़ता का वह बुद्धि विकास
भरा का धन्तर्नयन प्रकाश !
जन्मदिन का है यही हुजास
मृत्यु का यही दीर्घ निश्वास !

है यह वैदिक-वाद
विश्व का सुख-दुःखमय उत्साह
एकतामय है इसका नाद —

गिरा हो जाती है सनयन,
नयन करते नीरव भाषण
यवण तक आ जाता है मन
स्वयं मन करता बात श्रवण !

अयुधों में रहता है हास,
हास में अयुक्तों का भास,
स्वास में छिपा हुआ उच्छ्वास,
और उच्छ्वासों ही में स्वास !

बैचे हैं जीवन-तार,
सब में छिपी हुई है यह भँकार !
हरी बागुरी पुनहरी डेर

हो जाता संसार
 नहीं तो दारुण हाहाकार !
 मुरसी के से सुरसीस
 इसके हैं छिन्न सुरीले,
 भगणित होने पर भी तो
 तारों-से हैं चमकीले !

अचल हो उठते हैं चंचल
 चपल बन जाते हैं अविचल
 पिचल पड़ते हैं पाहल-दल
 कुसिद्ध भी हो जाता कोमल !

चढ़ावा भी है तो गुण से
 डोर कर में है मन आकाश
 पटकवा भी है तो गुण से
 सींचने को चकई-सा पास !

मर्म-पीड़ा के हास !
 रोग का है उपचार,
 पाप का भी परिहार,
 है भवेह सन्वेह नहीं है इसका कुछ संस्कार !
 हवस की है यह दुर्बल-हार !!

सींचसो इसको, कहीं क्या छोर है ?
 प्रीतवी का यह दुरंत-दुकूल है !

हो गया था पतझड़, मधुकाम
 पत्र तो आते हूँ, नवस !
 भड़ गए स्नेह-वृन्त से फूल
 लया यह असमय कैसा फल ! !

मिले थे दो मानस धनात
 स्नेह-क्षिति बिम्बित था मरपूर
 धमिल-सा कर अकल्प आघात
 प्रेम प्रतिमा कर दी वह बूर ! !

भूमता है सम्मुख वह रूप
 सुवर्णन हुए सुवर्णन पत्र !
 कास-सा रक्तवासा-राशि आन
 हो गया है हा ! अस्ति-सा बर ! !

बासक का-सा मारा हाव,
 कर दिए विकल हृदय के सार !
 नहीं अब रुकती है भंकार
 मही या हा ! क्या एक सितार ?

हुई मरु की मरीचिका आन
 मुझे गंगा की पावन-भार !

कहाँ है चर्कठा का पार ! !
 इसी वेदना में बिसीन हो अब मेरा संसार !
 तुम्हें जो चाहो है अधिकार !
 टूट जा यहीं यह हृदय हार ! ! !

कौन जान सका किसी के हृदय को ?
 सपन नहीं होता सदा अनुमान है !
 कौन भेद सका अगम आकाश को ?
 कौन समझ सका उदधि का गान है ?
 है सभी तो और दुर्बलता यही
 समझता कोई नहीं—क्या सार है !
 निरपराधों के लिए भी तो अहं !
 हो गया ससार कारागार है ! !

मेरा पाबस शत्रु सा जीवन
 मानस-सा उमड़ा अपार यम,
 गहरे, धुँधसे घुसे साँवले,
 मेघों से मेरे भरे नयन !
 कभी उर में अगणित मृगु भाव
 कूटते हैं बिहगों से हाथ !
 अदृश कमियों-से कोमल धाव
 कभी कूल पड़ते हैं असहाय !

इन्द्रधनु-सा आकाश का सेतु
 अलस में अटक कभी अछोर
 कभी कुहरे-सी धूमिल घोर,
 दीक्षती भावी चारों ओर !

तड़ित-सा सुमुखि ! तुम्हाय ध्यान
 प्रभा के पलक मार उर भीर,
 गूढ़ मर्जन कर जब गम्भीर
 मुझे करता है अधिक अधीर,

जुगनुओं-से उड़ मेरे प्राण
 लोभते हैं सब तुम्हें निदान !

बघकती है जसबों से क्वास
 बल गया भीसम व्योम प्रवास
 आज सोने का संध्याकास
 जल रहा अतुल्य-सा बिकरास !

हरी बांगुरी मुनहरी टेर

पटक रवि को बलि-सा पातास
एक ही वामन पग में—
सपकता है तमिल तत्काम
—धुँए का विश्व विद्यास !

चिनगियों से तारों को डाल
भाग का-सा भोगार शशि नाम
सहकता है—कैसा मणि जाल
जगत को इससा है तम व्यास !

पूर्व सुधि सहसा जब सुकुमारि !

सरस धुक-सी सुलकर सुर में

तुम्हारी मोली बातें

कभी दुहराती हैं सर में !

भगन-से मेरे पुसकित प्राण

सहस्रों सरस स्वरोँ में कूक

तुम्हारा करते हैं आह्वान

गिरा रहती है श्रुति-सी मूक !

देता हूँ जब उपवन

पियासों में फूसों के

प्रिये ! भर भर अपना जीवन

पिमाता है मधुकर को !

नबोका नाम सह्र

अथानक सपकूला के

हरी बाँसुरी सुनहरी डेर

प्रसूनों क डिंग रुक कर
सरकती है सत्वर ।

अकेली आकुलता-सी प्राण !
कहीं तब करती मृदु आभात
सिहर उठता कृष्ण गत,
ठहर जाते हैं पग अज्ञात ।

बेलता हूँ जब पतसा
इन्द्रधनुषी हलका
रेशमी घूँघट आदस का
सोलती है कुमुद कला ।

तुम्हारे ही मुख का तो ध्यान
मुझे करछा तब अस्तर्धान
न जाने तुमसे मेरे प्राण
चाहते क्या आदान !

बावलों के छायामय मेम
धूमते हैं धींखों में, फँस !
अबनि धौं अबर के बे खेल
शीत में असद, जलब में शैल !
शिखर पर बिबरमस्त रत्नवास
बेजु में भरता था जब स्वर,
मेमनों-से मेघों के बाल
कुकुते थे प्रमुदित गिरि पर ।

हरी बागुरी गुनहरी टेर

द्विरद दस्तों-से उठ सुम्बर
 सुखव कर-सीकर से बढ़ कर,
 भूति-से घोमित बिसर बिसर
 फल फिर कटि के-से परिकर,
 बदल ग्यों विविध वेश जसभर
 बनाते थे गिरि को गजधर !

धन्वमनु की सुनकर टकार
 उचक चपला के जलज-यास
 दीड़ते थे गिरि के उस पार
 वेस उड़ते विधिवर्षों की धार,
 मरुत जब उनको द्रुत घुमकार,
 रोक देता था मेधासार !

अजस के जय बे विमल विचार
 अशनि से उठ उठ कर ऊपर,
 विपुल व्यापकता में अधिकार
 सोन हो जाते थे सरदार,
 बिहुंगम-सा बैठा गिरि पर
 सुहाता था विशास प्रम्बर !

पपीहों की बह पीम पुकार,
 मिर्मरों की भारी भर भर
 मींगुरों की भीनी झनकार,
 घनों की गुरु गम्भीर धहर,

गगन के भी उर में हैं घाव,
 देखतीं ताराएँ भी राह,
 बँधा बिद्युत् छवि में जसबाह
 चन्द्र की चितवन में भी चाह
 दिखाते जब भी तो अपनाव
 अनिल भी भरती ठण्डी चाह !

हाय ! मेरा जीवन,
 प्रेम श्री' आँसू के कन ।
 चाह मेरा अक्षय धन
 अपरिमित सुन्दरता श्री मन ।

—एक बीणा की मृदु मङ्कार
 कहाँ है सुन्दरता का पार !
 तुम्हें किस दर्पण में सुकुमारि ।
 दिखाऊँ मैं साकार ?
 तुम्हारे छूने में या प्राण
 संग में पावन गंगा स्नान ।
 तुम्हारी बाणी में कल्याणि
 त्रिवेणी की सहर्षों का गान ।
 अपरिचित चितवन में या प्राप्त
 सुधामय साँसों में उपहार ।
 तुम्हारी छाया में आभास
 सुखद बेष्टाइयों में आभार ।

हरी बाँसुरी सुनहरी डेर

कलश मोहों में था धाकाध,
 हास में पौष का ससार,
 तुम्हारी भाँसों में कर बास
 प्रेम में पाया था धाकार !

कपोलों में उर के मृदु भाव
 अक्षय नयनों में प्रिय बसवि
 सरल सकेतों में संकोच,
 मधुल अक्षरों में मधुर वुराव !
 उवा का था उर में आवास
 मुकुल का मुख में मृदुल विकास,
 चाँदनी का स्वभाव में भास
 बिजारों में बच्चों के चाँस !
 बिन्दु में थी तुम सिन्धु धनस्त
 एक सुर में समस्त सगीत,
 एक कलिका में अखिल वसस्त
 धरा में थी तुम स्वर्ग पुनीत !

बिधुर उर के मृदु भावों से
 तुम्हारा कर नित नव मृगार
 पूजता हूँ मैं तुम्हें, कुमारि !
 मूँव तुम्हारे वृग द्वार !
 अक्षय पलकों में प्रति संसार
 पान करता हूँ रूप अपार,

माखी पत्नी के प्रति

प्रिये, प्राणों की प्राण !

म जाने किस गृह में अनजान
छिपी हो तुम, स्वर्गीय बिधान !
नवस कलिकाग्रों की सी वाण
वास रहि सी धनुषम असमान—
न जाने, कौन कहाँ अनजान
प्रिये, प्राणों की प्राण !

जननि भ्रंजस में झूल सकास
मृदुस उर कपन सी अपुमान,
स्नेह सुख में बह सखि ! बिरकास
वीप की धकसूप शिखा समान,
कौन सा भालय नगर बिछास
कर रही तुम वीपित, वृत्तिमान ?
शसम भ्रंजस मेरे मन प्राण
प्रिये, प्राणों की प्राण !

हरी बाँसुरी सुनहरी टेर

मधुर मधुच्छतु निर्दुष्य में प्रातः
 प्रथम कलिका सी भस्फुट गात,
 नील नम-प्रस-पुर में, सन्धि ।
 दृज की कला सवृष नवजात
 मधुरता, मधुसा सी तुम, प्राण
 न जिसका स्वाद-स्पर्श कुछ ज्ञात,
 कल्पना हो जाने, परिणाम ?
 प्रिये प्राणों की प्राण !

हृदय की पलकों में गति-हीन
 स्वप्न संसृति सी सुषमाकार,
 बाल भावुकता धीरे नवीन
 परी सी घरती रूप अपार
 मूलसी उर में भाज, किशोरि !
 तुम्हारी मधुर मूर्ति छविमान,
 साज में लिपटी उपा समान
 प्रिये प्राणों की प्राण !

मुकुल मधुपों का मधु मधुमास,
 स्वर्ण सुख श्री सौरभ का सार
 मनोभावों का मधुर विश्वास,
 विश्व सुषमा ही का संसार,
 धृगों में छा जाता सोस्मास
 म्योम-जाता का शरदाकाश

तुम्हारा भाता जबप्रिय ध्यान
प्रिये, प्रार्थों की प्राण !

अरुण अक्षरों की पस्तक-प्रात
मोतियों-सा हिमता हिम-हास
इन्द्रधनुषी पट से ठँक गात
वास विद्युत् का पावस-आस,
हृदय में खिल उठता तत्काल
अघसिमे-अंगों का मधुमास
तुम्हारी छवि का कर अनुमान
प्रिये प्रार्थों की प्राण !

खेल सस्मित सखियों के साथ
सरस शैलव सी तुम साकार,
सोस कोमल सहरो में लीन
सहर ही-सी कोमल लघु भार
सहज करती होगी सुकुमारि !
मनोमार्थों से वास बिहार
हँसिनी सी सर में कस तान
प्रिये प्रार्थों की प्राण !

सोल सौरभ का मृदु कव-वास
सूँघता होगा अनिल समोद,

सीसते होंगे उब जग-वास
 तुम्हीं से कसरत, केलि, बिनोद,
 भूम सधु पद बंधसता, प्राण !
 फूटते होंगे नव जसस्रोत,
 मुकुल बनसी होगी मुसकान,
 प्रिये, प्राणों की प्राण !

मूर्धनिल सरसी में सूरुमार
 अघोमुख अरुण सरोज समान
 मुग्ध कवि के उर के छू तार
 प्रथम का - सा नव गान,
 तुम्हारे शेष में सोमार,
 पा रहा होगा जीवन प्राण,
 स्वप्न-सा विस्मय-सा अस्तान,
 प्रिये, प्राणों की प्राण !

अरे वह प्रथम मिलन अज्ञात !
 विकपित मूवु-उर पुष्कित गात
 सद्यकित ज्योत्स्ना-सी चुपचाप,
 अद्वित पद नमित-पसक-दूग-पात,
 पात जब था न सकोगी प्राण !
 मधुरता में सी भरी अज्ञान
 भाव की छुईमुई सी म्स्तान
 प्रिये प्राणों की प्राण !

सुमुक्ति, वह मधुसूत ! वह मधुसार !
 यरोगी कर में कर सुकुमार !
 निश्चित जब नर नारी संसार
 मिलेगा नभ सुख से नभ बार
 अघर-उर से उर अघर समान
 पुष्पक से पुष्पक प्राण से प्राण
 कहेंगे नीरव प्रणयाख्यान
 प्रिये, प्राणों की प्राण !

अरे चिर गूढ़ प्रणय आख्यान !
 जब कि रुक जाएगा अनजान
 सौख-सा नभ उर में पवमान,
 समय निश्चल, निश्चि पलक समान,
 अवनि पर झुक जाएगा प्राण !
 व्योम चिर, निस्मृति से त्रियमाण
 नील सरसिज-सा हो-हो म्लान
 प्रिये, प्राणों की प्राण !

प्रतीक्षा

कब से विलोक्षणी तुमको
ऊँचा आ वातायन से ?
संध्या उदास फिर जाती
सूने गृह के आँगन से !

सहरें अधीर सरसी में
तुमको तकसी उठ-उठ कर,
सौरभ-समीर रह जाता
प्रेमसि, ठंडी साँसें भर !

हैं मुकुल मुँदे डालों पर,
कोकिल मीरव मधुवन में
फिरने प्राणों के गाने
उहरे हैं तुमको मन में !

तुम आधोगी आशा में
अपलक हैं निधि के उदगण !
आधोगी अभिसापा से
अनस धिरनव जीवन-क्षण !

हटै नागुरी पुनहरी टेर

स्मिति

मुसकुरा दी थी क्या तुम प्राण !

मुसकुरा दी थी आज बिहान ?

आज गृह-जन-उपजन के पास
लोटा राशि राशि हिम-हास,
खिस उठी धीपन में अवदाह
कंद-कनियों की कोमल प्रात ।

मुसकुरा दी थी बोझो प्राण !

मुसकुरा दी थी तुम मनजान ?

आज छाया बहुरिधि धुपचाप
मृदुल मुकुमों का मौनाक्षाप,
रूपहसी कनियों से कुछ सास,
सद पई पुसकित पीपल डाल,
और वह पिक की मर्म पुकार
प्रिये ! मर मर पड़ती सामार,
साज से गड़ी न आसो प्राण !
मुसकुरा दी क्या आज बिहान ?

हरी बागुटी पुनहरी डेर

नील कमल

नील कमल-सी हूँ वे भाँख !

इन्हे जिनके मधु में पीख—

मधु में मन-मधुकर के पीख,

नील जलज-सी हूँ वे पीख !

मृग स्वर्ण विरघों ने प्रात

प्रथम क्षिप्ताएँ वे जलज्वात

नील व्योम ने इस धमात

उन्हें नीलिमा दी नवजात,

बीजन की सरसी उस प्रात

महरा उठी जूम मधु-जात,

आकुल सहर्षों ने उत्काल

उतमें ज्वलता दी डाल,

नील नलिन-सी हूँ वे भाँख !

जिनमें बस दर का मधुवास

हृष्म कनी बन गया विद्याल,

नील सरोरुह-सी वे भाँख !

मन विहग

तुम्हारी भाँखों का आकाश !
सरस भाँखों का नीलाकाश—

खो गया मेरा खग अनजान,
भूगोक्षिणि ! इनमें खग अज्ञान !

देख इनका चिर कल्प प्रकाश
अरुण कोरों में उषा विसास
सोचने निकसा निभूठ निवास,
पसक पल्लव प्रच्छाय निवास,

न जाने से क्या-क्या अमिलाप
खो गया बाल विहग नादान !

तुम्हारे मननों का आकाश
सजस, क्यामल अकूत आकाश !

गूढ़ भीरव, गभीर प्रसार,
न गहने को तूण का आधार,

हटि बाँसुरी भुनहरी डेर

बसाएगा भीसे संसार,
प्राण ! इनमें अपना ससार ।

न इनका ओर-छोर रे पार,
खो गया वह नव पथिक प्रभान ।

प्रेम मीढ़

नवस मेरे जीवन की आस
बन गई प्रेम-बिहग का वास !

आज मधुवन की उन्मथ बात
हिमा रे गई पात छा गात,
मंद्र ध्रुम मर्मर सा पञ्जात
उमड़ उठता सर में उच्छ्वास !

नवस मेरे जीवन की आस
बन गई प्रेम बिहग का वास !

मदिर कोरों से कोरक आस
बेधते मर्म बार रे बार,
मूक चिर प्राणों का पिक आस
आज कर उठता करुण पुकार,

धरे आज जल-जल नवस प्रवास
सगाते रोम रोम में आस,
आज बोरे रे तरुण रसास
मौद-मन में डरा गई सुवास !

गृह काज

भाज रहने दो यह गृह काज
प्राण ! रहने दो यह गृह काज !

भाज जाने कैसी वातास
छोड़ती सौरभ-श्लेष उष्णवास,
प्रिये सासस-सासस वातास
जगा रोषों में सी अनिलाप !

भाज चर के स्तर-स्तर में प्राण !
सबग सौ-सौ स्मृतियाँ सुकुमार,
दृगों में मयूर स्वप्न ससार,
मर्म में मदिर स्पृहा का भार !

धियिप्त, स्वप्नित पंक्तियाँ खोम
भाज अपसक कलिकाएँ वास,
गूँजता भूसा भीरा डोम,
सुमुक्ति चर के सुख से वाचाम !

हरी बाँठुरी मुनहरी टेर

प्रायः चंचल चंचल मन-प्राण
प्रायः रेचिपिल शिपिल तन मार,
प्रायः दो प्राणों का बिन-मान
प्रायः ससार नहीं ससार ।

प्रायः क्या प्रिये सुहायी साथ ।
प्रायः रहने दो सब गृह काय ।

मधुघन

आज नव मधु की प्रात
 अलकसी नम-यलकों में, प्राण !
 मुख जीवन के स्वप्न समान —
 अलकसी, मेरी जीवन-स्वप्न ! प्रभात
 तुम्हारी, मुख-छवि सी रुचिमान !

आज सोहित मधु प्रात
 व्योम-मलिका में छायाकार
 खिल रही नव पल्लव सी लाल
 तुम्हारे मधुर कपोलों पर मुकुमार
 साज का क्यों मुहु किसलयजाल !

आज उन्मद मधु प्रात
 गगन के इंदीवर से नील
 भर रही स्वर्ण-भरंद समान
 तुम्हारे समन विधिल सरसिब उमील
 छलकता क्यों मदिरामस, प्राण !

भाज स्वर्णिम मधु प्रातः
 व्योम के विजय कृज में प्राण
 कुस रही नवस युताव समान,
 साज के बिनत वृत्त पर ज्यों अभिराम
 तुम्हारा मुञ्ज-धरविन्द सकाम ।

प्रिये मुकुलित मधु प्रातः
 मुक्त नभ बेणी में सोभार
 सुहावी रक्त पसाव समान,
 भाज मधुवन मुक्तों में मुक्त साभार
 तुम्हें करता निज बिम्बप्रधान ।

(२)

दोसने सगी मधुर मधुवात
 हितातून प्रतति कृज, सर-पात,
 दोसने सगी प्रिये ! मृदु वात
 गुंज-मधु-गज-बूझि-हिम - गात ।

दोसने सगी, चयित चिर कात,
 नवस कसि धसस-पलक-दस बास,
 दोसने सगी डाल से डाल,
 प्रमृद, पुसकाकुस कोकिल बास ।

युवाओं का प्रिय पुष्प युसाव,
 प्रणय-स्मृति-चिह्न, प्रथम मधुवास,

सोसता लोचन-दस मदिराम,
प्रिये चस अलि दस से वाचास !

प्राण मुकूमित-कृसुमित चहुँ ओर
तुम्हारी छवि की छटा अपार
फिर रहे उमद मधु प्रिय और
मयम पसकों के पंख पसार !

तुम्हारी मंजुस मूर्ति निहार
लग गई मधु के वन में ज्वास,
लड़े किणुक अनार, कचनार
साससा की सौ-से उठ सास !

कपोलों की मदिरा पी प्राण !
प्राण पाटल गुलाब के आस,
बिनत दुक-नासा का घर ध्यान
बन गये पुष्प पसाद्य अराल !

सिल उठी चल दधनावलि आस
कुंद कलियों में कोमल आस,
एक बंधन चितवन के ध्यान
तिसक को बार छन-सुख सास !

तुम्हारे चस पद भूम निहाल
मंजरि अरुण अलोक सकास,

हरी बागुरी मुनहरी टेर

स्पष्ट से रोम रोम तत्कास
सतत सिञ्चित प्रियंगु की बाल !

स्वर्ण-कसियों की शिथि सुकुमार
चुरा चम्पक तुमसे मुझ बास
तुम्हारी शूचि स्मिति से साभार,
प्रभर को घाने बे क्यों पास ?

देख कवच मृदु-पट्ट पद चार
सुटाता स्वर्ण राशि कनियार,
हृदय फूलों में लिए चहार
नर्म-मर्मज्ञ मुख मदार !

तुम्हारी पी मुक्त-बास तरंग
झाज बोरे भरि सहकार,
चुनाती नित सबग निज प्रेम
सन्धि ! तुम ही बनने सुकुमार !

साभिमा भर फूलों में प्राण !
सीसती साजवती मृदु साज
माधवी करती झुक सम्मान
देख तुममें मधु के सब साज !

नबेली बेसा उर की हार
मोतिया मोती की मुसकान

मोगरा कर्णफूल-सा स्फार,
 धौगुनियाँ मदनदान की वाम ।

तुम्हारी तनु-धनिमा मधु भार
 बनी मृदु वसति-प्रसवि का नाम,
 मृदुलता सिरिस-मुकुम सुकृमार,
 विपुल पुष्पकार्वालि चीना-डाल ।

प्रिये, कसि-कसुम-कसुम में धाज
 मधुरिमा मधु, सुखमा सुबिकास,
 तुम्हारी रोम रोम छवि-ध्याव
 छा गया मधुवन में मधुमास ।

(३)

वितरती गृह-वन मलय समीर
 साँस सुधि, स्वप्न सुरभि, सुख गान,
 मार केशर-सर मलय-समीर
 हृदय हलसित कर पुलकित प्राण ।

बेनि-सी फूल फल नवजात
 अपस, लघु-पद महसह सुकृमार
 निपट भगती ममयानिल गात
 मूल मुक-मुक सीरम के भार ।

घाज, लूण छव, लस मूम पिक, कीर,
 कूसुम कसि, ब्रतति, बिटप, सोभस्बास
 अस्मिन् भाकुम उत्कसित, अशीर,
 अमनि, अम, अनिम, अमस, आकाश !

घाज वन में पिक, पिक में गान,
 बिटप में कसि, कसि में सुबिकास
 कूसुम में रज रज में मज, प्राप !
 अस्मिन् में लहर, लहर में सास !

देह में पुसक छरों में मार
 भुजों में भग, दुर्गों में बाण,
 अमर में अमृत हृदय में प्यार,
 गिरा में लाज प्रणय में मान !

तरुण बिटपों से लिपट सुबात
 सिहरती लतिका मुकुसित गात
 सिहरती रह-रह सुख से प्राप,
 सोम-लतिका वन कोमल पात !

गंध-गुञ्जित कुंभों में भाव
 बेंबे बाँहों में छायाशोक
 मर्मरित लज पत्र-दल व्याज
 लिए द्रुम, तुमको लड़ी विसोक !

मिस रहे नवम बेलि-तरु, प्राण !
 सुको-सुक हंस-हसिनी सग,
 सह्र सर सुरमि समीर विहान
 मृगी-मृग, कलि धलि, किरण-मसंग !

मिलें झपरो से झपरा समान,
 मयन से नयन, गात से गात,
 पुलक से पुलक प्राण से प्राण,
 भुजों से भुज, कटि से कटि शात !

प्राण तन-सन मन-मन हों सीम,
 प्राण ! सुक-सुक स्मृति-स्मृति बिरसात,
 एक क्षण, अनिमल विशाबधि-हीन,
 एक रस, नाम रूप अज्ञात !

माख, तूण छव, सग मूग, पिक, कीर,
 कुसुम, कसि, वलति, बिटप सोम्बबास
 सलिस माकुल उत्कसित, घबीर
 मरमि, बस मनिस, मनस, माकास !

माख बन में पिक, पिक में याम,
 बिटप में कसि, कसि में सुविकास
 कुसुम में रज रज में मधु, प्राप्प !
 सलिस में सह्र, सह्र में सास !

बेह में पुलक उरों में भार,
 भुबों में भंग वृषों में बाण
 मघर में समूत हृदय में प्यार,
 गिरा में लाज प्रणय में मान !

उदण बिटपों से लिपट सुबास
 सिह्रणी सतिका मुकुसित गात,
 सिह्रणी रह-रह सुख से, प्राप्प
 सोम-सतिका बम कोमल गात !

गज-गुचित कुरों में माख
 बेंबे वीहों में लायाऽलोक,
 मर्मरित लज पन-दस व्याज
 लिए डुम, तुमको लकी विसोक !

मिल रहे नवस येसि-तरु, प्राण !
शुकी-शुक, हस-हसिनी संग,
सहर सर सुरभि समीर बिहान
मृगी-मृग, कलि-प्रलि, किरण-पतंग !

मिलें अक्षरों से अक्षर समान,
नयन से नयन गात से गात,
पुस्तक से पुस्तक, प्राण से प्राण,
भुजों से भुज, कटि से कटि शात !

आज तन-तन मन-मन हों लीन,
प्राण ! सुख-सुख स्मृति-स्मृति चिरसात,
एक क्षण, अलिल दिशावधि-हीन,
एक रस, नाम रूप अज्ञात !

हरी बाँसुरी पुनहरी डेर

रूप तारा

रूप-ताग तुम पूर्ण प्रकाम
मृपेक्षिणि ! सार्वक-माम !

एक सावप्य सोक छविमान
मव्य मसम समान
उविष्ट हो दुग-वष में भ्रममान
ठारिकाओं की ताम !
प्रणय का रच तुममे परिवेश
दीप्त कर दिया मनोनम-वेश
स्निग्ध सौन्दर्य-शिक्षा अनिमेष !
अमव अनिन्द्य अक्षेप !

उपा-सी स्वर्णोदय पर भोर
दिखा मुख कनक-किशोर
प्रेम की प्रथम भविरतम-भोर
दुर्गों में दुरा कठोर,
छा दिया योवन-विस्तर अछोर
रूप किरणों में बोर,

सजा तुमने सुख-स्वर्ण-सुहाग,
आज-सोहिस-अमुराग !

नयन-सारा बन मनोभिराम
सुमुखि, अथ सार्यक करो स्वनाम !

तारिका-सी तुम दिव्याकार
चद्रिका की झकार !

प्रेम-यखों में उड़ अनिवार
अप्सरी सी लक्ष्मी-भार,
स्वर्ग से उतरी क्या सोव्हार
प्रणय-हसिनी सुकुमार ?
हृदय-सर में करने अभिसार
रजत रसि स्वर्ण-बिहार !

आत्म निर्मलता में सखीन
चार चित्रा सी, आभासीन !
अधिक छियने में कुल अनजान
तन्वि ! तुमने लोचन मन छीन,
कर दिए पसक प्राण गति-हीन,
साज के जल की मीन !

रूप की-सी तुम अवसित विमान,
स्नेह की सृष्टि गवीन !

हृदय-नम-तारा बन छविधाम
प्रिये ! जब सार्धक करो स्वनाम ।

प्रथम यौवन मेरा मधुमास
मुग्ध तर मधुकर, तुम मधु, प्राण !
शयन सोपन सुषि स्वप्न विसास,
मधुर-संवा प्रिय-ध्यान !
शून्य जीवन निरुंग आकाश
इष्ट-मुख इष्ट समान,
हृदय सरसी, छवि पथ विकास
स्पृहाए अमिल-गाम ।

कल्पना तुममें एकाकार,
कल्पना में तुम पाठों याम
तुम्हारी छवि में प्रेम अपार,
प्रेम में छवि समिराम ?
अखिल इच्छाओं का संसार
स्वर्ण छवि में निब गढ़ छविमान,
बन गई, मानसि ! तुम साकार
वेह वो एक-प्राण !

गीत

जब मिलाते मौन-मयन पल भर,
क्षिप्त-क्षिप्त अपसक कलियाँ सुंदर

देखतीं मुग्ध, बिस्मित नम पर ! जब०

तुम मखिर अघर पर मधुर अघर
धरते, ऋते हिम-कण ऋद् ऋद्
मोती के चुवन से चूकर

मूवु मूकुसों के सस्मित मुख पर ! जब०

तुम आसिगन करते, हिमकर !
माखतीं हिलोरेँ सिहर-सिहर !
सी-सी बाँहों में बाँहें भर

सर में, आकुल उठ-उठ गिरकर ! जब०

बध रहस्य मितन होता सुखकर,
स्वर्गिक सुख स्वप्नों से सुखर
भर जाता स्नेहातुर होकर,

भग-भग का विरह बिषुर भतर । बध०

हरे बाँसुरी सुनहरी टेर

सहरों का गीत

अपने ही सुख से फिर बचस
हम खिस खिस पड़ती हैं प्रतिपन्न !
जीवन के फेनिस मोती को
से-से चल-करतल में टममस !

जाने किस मधु का मसय परस
करता प्राणों को पुसकाकुस
जीवन की लहलह लतिका में
विकसा इच्छा के तब-तब बल !

सुन-सुन मधु मुरली की मृदु ध्वनि
गूह-पुसिन साथ, सुख से विह्वल
हम हुलस मृत्य करतीं हिस हिस,
खस-खस पड़ता उर से अचस !

फिर जन्म-मरण को हस-हँस कर
हम आसिगन करतीं पस-पस,
फिर फिर असीम से उठ-उठकर
फिर फिर उसमें हो-हो भोक्तस !

हरी बाँसुरी सुनहरी डेर

हवा के झकोरों का गीत

हम फिर अदृश्य नमवर सुंदर
अपनी ही सचिमा पर निर्भर !
शोभित मृदु नीलाशुक तन पर,
स्मित तुहिन-बाव्य से पुसकित पर !

अपने ही सुख से सिहर सिहर
नम-बीणा के से स्वर्गिक स्वर
छा भेते हम जग का अंबर
सहृद्य सह्रों से सह्रों पर !

अंबरों में भर अस्फुट मर्मर
साँसों से पी सौरभ सुखकर
फिरते चहते हम निशि बासर
बढ़ बिजब्रीच जप्त जसलों पर !

हम साँस-साँस में आस अमर
करते दुर उर-उर के भीतर,

बनकर फिर मरना से दुर्घर
 मृत जीर्ण जगत बल लेत हर !
 जिस उठते अपस परस पाकर
 पुसकों से लूण तख्त सत्वर,
 नाचती सग बिबसमा लहर
 बाँहों में कोमल बाँहें भर !

आम्र वन

मंत्ररित आम्र वन छाया में
हम प्रिये मिले थे प्रथम बार,
ऊपर हरीतिमा-जम गुञ्जित
नीचे चंद्रातप छाया स्फार !

तुम मुग्धा की प्रति भावप्रबण,
उकसे थे घोंबियों-से उरोज
बचन प्रगल्भ, हंसमुख, उदार
मैं ससज,—तुम्हें था रहा सोज ।
छनती थी ज्योत्स्ना शशिमुख पर,
मैं करता था मूस सुषा पान—
कूकी की कोकिल हिमे मुकुल,
भर गए गंध से मुग्ध प्राण ।

तुमने पधरों पर घरे झपट,
मैंने कोमल बपु मरा गोद,

हरी बांगुरी पुनहरी डेर

था आत्मसमर्पण सरल, मधुर
 मिस गए सहज भास्तामोद !
 मंजरित आनन बन के नीचे
 हम प्रिये मिसे से प्रथम बार,
 मधु के कर में था प्रणय-वाण,
 पिक के उर में पावक पुकार !

विजन घाटी

वह विजन बाँदनी की घाटी
छाई मृदु वन सब गंध वहीं,
नीबू पाइ के मधुसों के
मद से मसयानिम सदा वहीं !

सौरभ स्सव हो घाटे तन मन
विछड़े झरझर मृदु सुमन धवन
जिन पर छन कंपित पत्रों से
मिलती कुछ ज्योत्स्ना वहीं-तहीं !

आ कोकिल का कोमल कूजन,
उकसाता प्राकृत तर कंपन,
वीजन का री, वह मधुर स्वर्ग,
जीवन वाधाएँ वहीं कहीं !

ग्राम युवती

उमद यौवन से उमर
घटा सी नव घसाढ़ की सुन्वर,
अलि श्याम वरण
दलध, मद चरण,
झुल्लाती माती ग्राम युवति
वह गजगति
सर्प ङगर पर !

सरकाती पट
बिसकाती-सट,—
झरमाती झट
वह नमित वृष्टि से बेस तरोजों के युग घट !
हँसती ललललल,
अबला अबल
ग्यों फूट पड़ा हो स्रोत सरल
भर फेनोज्ज्वल दल्लमों से अघरों के तट !

वह मग में रुक,
 मानो कुछ भुक,
 घाँचम सेभासती फेर नयन मुह,
 पा प्रिय पद की आहट,
 धा घाम मुबक,
 प्रेमी याचक,
 जब उसे छाकसा है इकटक
 उस्मसित,
 चकित,
 वह सेती मूँव पसक पट !

पमघट पर
 मोहित नारी नर ! —
 जब बस से नर
 भारी गागर
 खींचती उबहनी वह बरबस
 बोली से उमर-उमर कसमस
 छिपते लँग युग रस भरे कसघ—
 बस छलकाती
 रस बरसाती,
 बलसाती वह धर को धाती
 सिर पर घट
 उर पर धर पट !

हरी बाँसुरी सुनहरी डेर

कानों में गुड़हल
 पोंस, — धबल
 या कुई कनेर, लोष पाटल,
 वह हरसिंगार से कष संभार
 मूषु मीलसिरी के गूँष हार,
 गजधों सँग करती बम बिहार,
 पिक खातक के सँग व पुकार—
 वह कूद काँस से,

भ्रमलतास से
 धात्र मौर, सहजन पसाण से
 निर्जन में सब छेतु सिंगार !
 तन पर यौवन सुपमाशामी
 मुस पर धमकण रविकी लामी
 सिर पर धर स्वण सस्य डाली
 वह मेढ़ों पर घाती जाती
 उर मटकाती,
 कटि लचकाती
 बिर वपस्तिम हिम की पामी
 धनि स्याम वरण
 भति लिप्र भरण
 भधरों से धरे पकी बासी !

रे दो दिन का
 उसका यौवन !

हरी बाँधुरी मुनहरी डेर

वह मग में रुक,
 मामो कुछ झुक
 साँस से साँसती फेर नयन मुख
 पा प्रिय पद की चाहट,
 सा माम युवक
 प्रेमी याचक,
 जब उसे छाकटा है इकटक,
 उत्ससित,
 चकित,
 वह लेती मूँच पसक पट ।

पनघट पर
 मोहित मारो मर । —
 जब जब से मर
 भारी गागर
 सींचती उबहनी वह, बरबस
 चोरी से उमर-उमर कसमस
 छिपते तैंग युग रस भरे कसक—
 बस छलकाती
 रस बरसाती,
 बल्लाघाती वह घर को बाती,
 छिर पर घट
 उर पर घर पट ।

कानों में मुड़हम
 खोंस, — धपस
 धा कुँई, कमेर, सोध पाटस,
 वह हरसिगार से कच सेंबार
 मूदु भीससिरी के गूँध हार,
 गजधों सँग करती बन विहार
 पिक जातक के सँग द पुकार—
 वह कूद काँस से,

भमसतास से
 धात्र मोर, सहजन, पसाध स,
 निर्जन में सज ऋतु सिगार ।
 सम पर मौवन सुपमासासी
 मुख पर अमकण, रवि की सासी,
 सिर पर धर स्वण सस्य बासी,
 वह मेढों पर धाती जाती
 उद मटकाती,
 कटि सजकाती
 बिर वर्षातम हिम की पासी
 धनि ध्याम वरण
 धति सिध वरण
 धधरों से धरे पकी बासी !

रे दो दिन का
 उसका मौजन !

सपना छिन का
 रूतानस्मरण !
 दू सों से पिस
 दुबिन में पिस,
 धरैर हो जाता उसका सन !
 वह जाता असमय यौवन धन !
 वह जाता तट का तिमका
 जो सहरो से होस चेला कुछ क्षण ! !

रेखाचित्र

बाँदी की चौड़ी रेती
 फिर स्वर्णम गंगा धारा
 जिसके निक्षेप सतर पर विजडित
 रत्न छाय नभ सारा ।

फिर बालू का मासा,
 समा ग्राह खुद सा फैसा,
 छितरी जल रेखा—
 बछार फिर गया दूर तक मसा ।

जिस पर मछुओं की मड़ई
 भी तरबूजों के ऊपर,
 बीच-बीच में सरपत के मूठे
 लग से खोले पर ।

पीछे, बिजित बिटप पाँति
 सह्राई सांध्य जितिज पर,

जिससे सट कर, मील घूम
रेखा ज्यों लिपी समांतर !

बहुपिच्छ-से जसव पंख
प्रंबर में बिखरे सुन्दर
रग रग की हसकी गहरी
छायाएँ छिटका कर ।

सबसे ऊपर निर्धन नम में,
अपसक संख्या तारा
नीरव शौ' निःसंग
सोजता सा कृच्छ्र पिरपयहारा ।

सौम्य,—मयी का सूना तट,
मिमता है नहीं किनारा,
सोच रहा एकाकी जीवन,
साथी स्नेह सहारा ।

स्त्री

यदि स्वर्ग कहीं है पृथ्वी पर, तो वह नारी-चर के भीतर
बस पर दल खोस हृदय के स्तर
जब बिठसाती प्रसन्न होकर
वह अमर प्रणय के शतदल पर !

मादकता जग में कहीं अगर वह नारी अधरों में सुलकर,
लज म प्राणों की पीडा हर
नव जीवन का दे सकती घर
वह अधरों पर घर मदिराघर !

यदि कहीं नरक है इस भू पर तो वह भी नारी के अवर,
वासनावर्त में डास प्रखर
वह अंध गर्त में फिर दुस्तर
नर को डकस सकती सरवर !

याद

विदा हो गई सौम्य विनत मुख पर भीना धाँधल धर
मेरे एकाकी घाँगन में मौन मधुर स्मृतियाँ भर !
वह केसरी दुकूल घभी भी फहरा रहा सिस्त्रिज पर,
नव घसाढ़ के मेघों से घिर रहा बराबर मगर !

मैं बरामदे में सेटा शय्या पर पीड़ित प्रवयव,
मत का साथी बना वादनों का विषाद है नीरव !
सक्रिय यह सकलण विषाद —मेघों से उमड़-उमड़कर
भावी के बहु स्वप्न, भाव बहु व्यथित कर रहे मगर !

मुझ पर विरह दादुर पुकारता उत्कलित मेकी को,
बह्मभार से मोर लुभाता मेव मुग्ध केन्ही को
धामोक्ति हो उठता मुख से मेघों का नम बचस
अंतरसम में एक मधुर स्मृति बग-बग उठती प्रतिपल !

कपित करता बल धरा का घन गभीर गबैन स्वर
मूपर ही घा गया उतर लल भाराघों में अंभर !

भीनी भीनी माप सहज ही साँसों में धुलमिल कर
एक और भी मधुर गंध से हृदय दे रही है भर !
नव असाढ़ की सन्ध्या में मेघों के तम में कोमल
पीकित एकाकी धूम्र पर दल भावों से विह्वल
एक मधुरतम स्मृति पल भर विद्युत सी बलकर उज्ज्वल
याद दिलाती मुझे हृदय में रहती ओ तुम निरवल !

अगुठिता

वह कैसी थी
मम न बता पाऊँगा
वह वैसी थी !

प्रथम प्रणय की आँखों ने था उसको देखा,
यौवन उदय
प्रणय की थी वह प्रथम सुनहली रेखा !

ऊँचा का अगुठन पहने,
क्या जाने लग पिक से कहने
मौन मुकुल सी मृदु धारों में
सधुन्धरु बंदी कर आई थी !
स्वप्नों का सौन्दर्य कल्पना का माधुर्य
हृदय में भर आई थी !

वह कैसी थी
वह न कथा पाऊँगा
वह वैसी थी !

क्या है प्रणय ! एक दिन बोसी उसका वास कहाँ है ?

इस समाज में ? वेह मोह का
वेह द्रोह का वास जहाँ है ?

वेह नहीं है परिधि प्रणय की,
प्रणय दिव्य है मुक्ति हृदय की
यह अनहानी रीति

देह बेदी हो प्राणों के परिणय की ।

बंधकर हृदय मुक्त होवे हैं
बंधकर वेह यातना सहती
मारी के प्राणों में ममता
बहती रहती, बहती रहती !

नारी का तन माँ का तन है,
जाति वृद्धि के लिए विनिर्मित
पुरुष प्रणय अधिकार प्रणय है
सुख विसास क हित उत्कलित !

तुम हो स्वप्न सोच के बानी,
तुमको केवल प्रेम चाहिए,
प्रेम तुम्हें बती में धवसा
मुझको धर की क्षेम चाहिए ।

हृदय तुम्हें देती हूँ प्रियतम,
वेह नहीं दे सकती,

जिसे बेह दूँगी जब निश्चित
स्नेह नहीं दे सकती !

‘अत बिदा दो मन के साथी
तुम मम के, मैं भू की वासी
नारी तम है तम है तन है
हे मम प्राणों के समसाथी !

नारी बेह सिखा है जो
नव बेहों के नव दीप संजोती,
जीवन जैसे देही होता,
जो नारीमम बेह न होती ?

‘तुम हो स्वप्नों के द्रष्टा, तुम
प्रेम ज्ञान की सत्य प्रकाशी,
नारी है सोम्य प्राण
नारी है रूप सुजन की प्यासी !

‘तुम जग की सोचो मैं घर की
तुम अपने प्रभु, मैं निज वासी
सज्जा पर न तुम्हें आसी,
बन सकते नहीं प्रेम सम्पासी ?’

‘बिदा !’ ‘बिदा !

‘शायद मिल जाएँ यदा कदा !

मैं बोला 'तुम जाओ
प्रसन्न मन जाओ, मेरा भाषी'
उसके नयनों में घाँसू थे
अधरों पर निश्छल हँसी।

वह क्या समझ सकी थी उस पर
क्यों रीझ या यह आत्मातुर
स्वप्न शोक का वासी।

मैं मौन रहा
फिर स्वतः कहा,

'बहती जाओ, बहती जाओ
बहती जीवन धारा में
शायद कभी लौट आओ तुम
प्राण धन सका अंगर सवहारा मैं।'

स्वप्न सखी

घाघो हे चिर स्वप्न सखी, घाकुस धंतर में घाघो
 फूलों की नव कोमलता में जीवन का बिपटाघो !
 इन प्रिय स्नेह सरों में धपसक धरद नीसिमा बागूत
 चपल इस पंक्तों से धुंभित सरसिख थी भरसाघो !
 इस प्रवाल प्यासे की मधु मदिरा सखि उर मादन
 सुहिन फेन स्मित स्वर्णम प्रीति सुखा पट मुन्दे पिनाघो !

स्नेह सटा-से पुसक पाछ में कस मुकुनों के कोमल
 उर में मुमधुर उर सी, तम में तन सी मृदुल समाघो !
 सुरमित साँसों के पत्तने में मर्म स्पृहा कर दोलित
 फूलों के मधु सिसरों पर प्राणों के स्वप्न सुसाघो !
 इन मोसम चपक झरनों से सिपटी बिद्युत् सपटें,
 प्रथम उदधि में धंतर की ज्वाला को धतल दूदाघो !
 मेठा नव सावध्य जादनी सा बेसा के बन में
 खिसली कलिकाभा की सोमा कोमल सेज सजाघो !
 स्वप्नों की पी सुरा भाज यौवन जाये विस्मृति में,
 धँसल बिद्युत् को समज्ज ज्योत्स्ना के झक भगाघो !
 घाघो हे प्रिय स्वप्न सखिनी, घाकुस उर में घाघो !

नारी जग

पूयक न शबिक रहा नारी जग
 घरे पुख्य के संग उरने पग
 रंग तरंगित जिसकी भी से
 कुसुमित सुपमित जग का मरुमग !
 गुड़ियों के संग प्रिय किशोर क्षण
 बीते, उर में भर मुकु कपन,
 सींच कुसुम बनू तन, यौवन ने
 किया रूप सम्मोहन वर्णन !
 वक्ष शोणि ने बड़ कटि ने छंट
 सीप्लव रेखाएँ कीं रूपित
 मुख नयनिमा ससज साजिमा,
 पद जड़िमा ने तरणी बिभित !

शोभा कँपती लहरी सी उठ
 हुई बेह समिमा में स्तमित,
 देख मुकर-से तम में निज मुख
 रही मधुरिमा छवि से विस्मित !

कोमलता बड़ कल्पलता सी
धंगमगि में हुई प्रस्फुटित
सुन्दरता ही प्रीति तूलि से
बनी मोहिनी प्रतिमा जीवित ।

हुए रूपसी के नव धवयव
यौवन के धातप में विकसित
मधुर स्त्रीत्व में धातु कल्पना
सुबन बसा के कर से मूर्तित ।
जगा समज बेष्टाओं में भव
नव लीला सावज्य अकल्पित,
पलक भ्रुकुटि धगुमि वासन में
छवि की दीप सिखारूँ कपित ।

तिमिर ज्वाल सा केस ज्वाल बन
पृष्ठ बेस पर हुषा प्रज्वलित
धामा जीयी नयनों को कर
कोमल शोभा-रम से मोहित ।
स्वप्नों से मुक्ति यमुना जल
गाढ़ नीलसरग हुषा तरंगित,
साँस से रहे फूसों के रंग
सौरभ की क्यरी में दोषित ।

कोचन सी तप ज्वलित कामना
उसी सघन जलनों में दोषित

हरी बाँसुरी गुनहरी टर

बनी कठोर कुसुम कोमलता
 योनि मार में हो निर पंजित !
 शत्रु सत्ताएँ फूल पाश बन
 पुसकों में हो उठीं पत्तवित
 कोमल करतल चंचल पदतल
 जीवन के आवक से रंजित !

रूप पिला की थी सुपमा से
 हुए गेह धांगन प्राप्नोक्ति
 चातामन में उदित कला छद्मि
 गृह-गृह के गवाक्ष धिर द्योमित !
 कलि कुसुमों ने मृतस को रंग
 किया धोमना के हित सज्जित,
 उर की साँसों में बहने को
 बना समीर गणबह सुरमित !
 ज्योत्स्ना सकुची उपा सबाई,
 रत्नों सारिकाएँ ज्यों विस्मित,
 स्रोत बहे सरसी सह्राई,
 निखिल प्रकृति थी हुई प्रभावित !

हृदयासन पर बिठा प्रेम ने
 किया धमर स्वप्नों से पूजन
 समा स्वर्ग ने स्वर्ण घटों में
 स्वीकृत किया मर्त्य मुक्त बंधन !

दो टुकड़ों में सिमिट नीमिमा
 रही मौन नयनों में अपसक,
 सजा धरर नव प्रणय वचन से
 गए क्षमिमा से गूहरे रंग !
 क्षिसती कमियों ने मार्यर धर,
 कोकिल ने दे गीत क्षयित स्वर,
 मोहक उसे किया ज्योत्स्ना ने
 गोपन सज्जा में बेष्टित कर ।

मधु ने फूल ज्वाला से भावूत
 किया धरर ने लल्ला-मुल्ल स्मित,
 मणि मुक्तामय क्षति सागर ने
 मू ने स्वर्ण रत्न से भङ्कृत ।
 जगा हृदय में प्रीति वर्ष नव
 खट-खट नयनों से हो लक्षित
 हाव भाव में मधुर सममन
 घोभा तन सज्जा से संबूत ।

ठडित गर्म सुरषनु कबरी बन
 ज्यों कृतार्थ होता मू पर भर,
 मधुर प्रप्तरा बनी बनी धर
 कुल प्रदीप से ज्योतिष कर धर ।
 मातृ स्नेह वरसा नव शिशु पर
 मुख प्रणयिनी हुई मिच्छावर,
 सहर्षमिणी बनी वह प्रिय की
 सुल्ल दुल्ल की मंत्री, चिर सहधर !

हरी बागुटी गुनहरी टेर

मर्म कथा

वाँच दिए क्यों प्राण
प्राणों से !
तुमने विर धनवान
प्राणों से !

गोपन रह न सकेगी
अब यह मम कथा
प्राणों की न छेकेगी
बढ़ती विरह व्यथा

विबश, फूटते गान,
प्राणों से !

यह विदेह प्राणों का भ्रमन,
अंतर्ज्वाला में तपता तन !
मुख हृदय, सौन्दर्य शिखा को
दग्ध कामना करता अर्पण !

महीं चाहता वो कुछ भी माया
प्राणों से ।
बाँध दिए क्यों प्राण
प्राणों से ।

हरी बाँसुरी गुनहरी देर

प्रणय कुज

तुम प्रणय कुज में जब आई
पल्लवित हो उठा मधु यौवन
मंजरित हृदय की धमराई ।

मलय कुशा मद खंखस
सहराया सरसी जल
अनि गूंज उठे, पिक ध्वनि छाई ।

जब वह स्वप्न अयोधर,
मर्म व्यथा, मंचित करती धंतर,
प्राणों के दल झर-झर,
करते आकुल मर्मर ।

बिर विरह मिमन में भर साई
तुम प्रणय कुज में जब आई ।

शरद चाँदनी

शरद चाँदनी !

बिहोस उठी घटल मौस
नीसिमदा सदासिनी !

प्राकृत सौरभ समीर
सस-सस बस सरित नीर
हृदय प्रलय से मधीर
जीवन उन्मादिनी !

अधु सजस शरद इस
अपमक दुग गिनते पस
छेड़ रही प्राण विकस
बिरह बेणु वादिनी !

कहीं कसुम कसि बर-बर
जमे रोम सिहर-सिहर
राधि कसि सी प्रेमसि स्मृति
कभी हृदय क्लादिनी !
शरद चाँदनी !

हरी बागुछी पुनहरी देर

मर्म व्यथा

प्राणों में फिर व्यथा बाँध दी !
 क्यों फिर दग्ध हृदय को तुमने
 वृथा प्रणय की समर साध दी !

पर्वत को जल दाह को धनस
 बारिद को दी बिद्युत् खचल,
 फूल को सुरभि, सुरभि को विकस
 उड़ने की इच्छा प्रवाध दी !

हृदय दहन रे हृदय दहन
 प्राणों की व्याकुल व्यथा गहन !
 यह सुलयेयी होगी न सहन
 बिरस्मृति की दबाव समीर साध दी !

प्राण पसंगे, देह जलेगी,
 मर्म व्यथा की नशा डलेगी
 सोने सी तप, निलरेगी
 प्रेयसि प्रतिमा, ममता प्रगाध दी !
 प्राणां में फिर व्यथा बाँध दी !

हरी बाँसुरी गुनहरी डेर

तुम्हें देखने खोमा ही ज्यों सहरी सी उठ आई,
भंग भंगिमा तनिमा बन भूदु बेही बीज समाई,
कोमलता कोमल भंगों में पहिले तन भर पाई।

फूल खिल उठे तुम वीसी ही भू को वी दिसलाई,
सुन्दरता बसुधा पर खिल सौ सी रंगों में छाई,
छाया सी ज्योत्स्ना सकुची प्रतिछवि सी उपा सजाई।

तुम में जो सावप्य मधुरिमा, जो असीम सम्मोहन
तुम पर प्राण निछावर करने पागल हो उठता मन !
नहीं जानती क्या निज बल तुम निज अपार आक्यष ?

बाँध लिया तुमने प्राणों को प्रणय स्वप्न बंधन में
तुम जानो क्या तुमको माया भर्म छिपा क्या मन में
इन्द्र धनुष बन कर हँसती तुम अश्रु वाप्य के धन में।

स्वप्न बेहो

स्वप्न बेही हो, प्रिये तुम
देह तनिमा भयु बोई !
रूप की सौ सी सुनहली
दीप में तन के संजोई !

सेव पर सेटी सुषर
सौन्दर्य छाया सी सुहाई,
काम बेही स्वप्न सी
स्मृति वस्त्र पर तुम की दिखाई !

कल्पना की मधुरिमा सी
भाव मृदुता में कुबोई !

देह में मृदु देह सी
उर में मधुर उर सी समा कर,
निपट प्राणों से गई तुम
बेतना सी निपट सुन्दर !

प्रेम पसकों पर अकल्पित
रूप की सी स्वप्न सोई !

विरस पट से ससक
कमल कमल करते हृदय मोहित,
सरित जल में तैरती ज्यों
नील धन छाया तरंगित !

काम वन में प्रणय ले हो
कामना की बेसि बोई !

सालसा - तम से तुम्हारे
कुत्तलों के बाल में अम
क्यों न होता प्यार अभा
छवि अपार निहार निरुपम !

मर्म की आकुल वृषा तुम
प्रणय पवासों में पिरोई !

स्नेह प्रतिमा सी मनोरम
मर्म इच्छा से विनिर्मित
हृदय सतत में सतत तुम
मूमती अभिसाप स्पंदित !

सार तत्कों की बनी तुम
देह भूतों बीच सोई !

हरी बाँतुरी गुनहरी देर

हृदय सारण्य

आन्र मंजरित, मधुप मुंजरित
 यंघ समीरण मंघ संजरित !
 प्राणों का पिक बोल उठा फिर
 अंतर में कर ज्वास प्रज्वलित !

आल आल पर चौड रही यह
 ज्वास रंग रंगों में कुसुमित,
 नस - नस में कर खिर प्रवाहित
 उर में रस बस गीत तरंगित !

उन का यौवन नहीं हृदय का
 यौवन रे यह आज उज्ज्वलित,
 फिर जग में सौन्दर्य पल्लवित
 प्राणों में मधु स्वप्न जागरित !

आन्र मंजरित, मधुप मुंजरित
 यंघ समीरण यंघ संजरित !
 प्राणों में पिक बोल उठा फिर
 विशि-दिशि में कर ज्वास प्रज्वलित !

भामसी

[यह पुरुष नारी का रूपक है। नेपथ्य में पीठ बाध बुरियों के समुत्पन्न
बेच बिन्यास पिक भिन्न भोग का पपीहा बिरह रसाव का प्रतीक है। कुच
नारियाँ सामीप रंघों के बरुओं में लोपिकाएँ चटकीले झूमते सहैयों और
घोड़नियों में निम्न निम्नबिवाई केसरी और बेस्के सबादो में तथा पाशु
निकाएँ विविध प्राणों में गुरेन कुचविपुर्ण परिवानों में लावती है। अंतिम
बुरियों में मविप्य के निर्माता रूपक मयिक तथा मध्य उज्ज्व बयों के युवक
सफेद और काकी कादी में एवं ससृष्टि की सविष बाहिकाएँ नव युवतिमा
रंघीन रेसनी बरुओं में मृत्य नादय एवं मन्त्रिणय करती हैं। जहाँ मकेसे पिक
चातक तथा युवक कुचती की आत्मा के पीठ हैं, वहाँ प्ररणन की सुविधा
नुसार अन्य युवक कुचतिमा भी सहायक हो सकती हैं।]

प्रथम पुरुष

(१)

युवक

पिक गाधो !

नव जीवन के आरण बन

नव प्रणय कथा बरसाधो !

पिक गाधो !

हरी बांसुरी सुनहरी टेर

प्रीति भुक्त हो, बने न दग्धन,
 विरह मिसल देवें भासिगन
 हो प्रसीति-मन नरनारी जन
 विधि-दिशि ज्वाल जलामो !

आज वसत विपरता मू पर
 नव पत्सव के पंख जोस कर,
 मबल चेतना की स्वर्णिम रज
 गंध समीर, उड़ाओ !

कौन ठरणि तुम हूँसी रंगीली
 बिहाराती माँसु से गीली ?
 भीवन गस, प्रिये कंकरीली
 धामो, पर, तुम धामो !
 पिक गामो !

(२)

पिक

बीरी की जीवन धमराई,
 गध मद दीतल पुरवाई,
 यह भुग्धा भीवन में आई,
 नव ऊया सा सहज सवाई !
 कूह, कूह कूह !

फूलों का उसका कोमल तन,
 घोरम की साँसों का मधु मन,

रोझों रोझों में भासिगम,
बिज सिखी थी रूप मुनाई !
कुह कुह कुह !

कुटिस कैंटीसा इस जग का मग
रंगे खिर से जीवन के पग
पीड़ा की प्रेमी की रग-रग
ब्यथा प्रेम की ही परछाई !
कुह कुह कुह !

प्रेम ? प्रेम को मिता छाप रे
मनस्ताप वह, मनस्ताप रे
जग जीवन के लिए पाप रे
नम में विरह पटा फिर छाई !
कुह कुह कुह !

(३)

मुबक

तुम जाओ छलि जाओ !
पाप छाप से बचो प्रिये तुम
छाप न छर में पाओ !
तुम जाओ !

प्राण, प्रणय बिप पान मत करो
प्राणों को दे प्राण मत हरो

हरी बागुड़ी बुझाये डेर

प्रिय का उर में ध्यान मत करो,
पय में मत विलमाओ !

जब तक जीवन में बसत है,
जीवन में मुकुमित विगत है,
आशा सुख सपने घनत है,
प्रिय का मोह भुसाओ !
तुम आओ !

युवती

असे तुम हो, वैसे ही जन,
बही हृदय, छवि सोनी सोचन,
वही प्रणय का साप है यहन,
तुम मत हृदय दुसाओ !
प्रिय, आओ !

किसको रे वह ऐसी क्षमता
रोक सके प्रारों की ममता,
यह स्वभाव मन का, वह रमता,
मृगको यह सुझाओ !
प्रिय, आओ !

युवक

फूलों की मधु देह तुम्हारी,
कौटों की कटु गैस हमारी,

हरी बाँसुरी सुनहरी डेर

रोषों रोषों में धासिगन
बिज सिखी की रूप सुमाई !
कूह कूह कूह !

कुटिल कँटीसा इस जग का मग
रँगें रधिर से जीवन के पग,
पीड़ा की प्रेमी की रग रग
व्यथा प्रेम की ही परछाई !
कूह कूह कूह !

प्रेम ? प्रेम को मिता टाप दे,
ममस्ताप बह ममस्ताप रे
जग जीवन के लिए पाप दे
नम में विरह बटा फिर भाई !
कूह कूह कूह !

(३)

युवक

तुम जाओ सखि जाओ !
पाप टाप से बचो प्रिये तुम
ताप न चर में पाओ !
तुम जाओ !

प्राण प्रणय विष पान मत करा
प्राणों को दे प्राण मत हरो

हरी बाँधुरी नुनहरी टेर

प्रिय का घर में ध्याम मत धरो
पथ में मत बिलमाओ !

जब तक जीवन में बसंत है,
जीवन में मुकुलित दिगत है
आशा सुख सपने घनत हैं,
प्रिय का मोह भुलाओ !
तुम आओ !

युवती

जैसे तुम हो वैसे ही बन,
वही हृदय, छवि लोभी सोचन,
वही प्रणय का ताप है गहन,
तुम मत हृदय बुझाओ !
प्रिय, आओ !

किसको रे वह ऐसी क्षमता
रोक सके प्रारों की ममता,
यह स्वभाव मन का, वह रमता,
मुझको राह सुझाओ !
प्रिय आओ !

युवक

फूलों की मृगु देह तुम्हारी
काँटों की कटु वेस हमारी,

प्रणय साप अति दुःसह प्यारी,
 वृथा न हृदय लुमाओ !
 तुम जाओ !

प्रणय अचिर, दो दिन का सपना
 सन का उपना, मन का उपना
 सुन न सकूँगा प्रिये कसपना
 अपना सुख न गँवाओ !
 तुम जाओ !

वृषपक्ष

(४)

पपीहा

पी कहीं पी कहीं ?
 प्रेम बिना सुना जग जीवन
 प्रिय के मधुर प्रतीक्षा के क्षण,
 बरसामो प्रिय स्वाति सुषा कण
 घाट ओहवा विष्व यहाँ !

प्रेम बिना जग है जीवन-मृत
 प्रेम बिना अपने में सीमित,
 मित्रता जहाँ प्रणय चरणामृत
 मृत्यु न घाती पास तहाँ !

हरी बागुली गुनहरी टेर

प्रेम नहीं प्राणों का भ्रमन,
 प्रेममग्नस्थिरविरह मिसनक्षण
 प्रेम मुक्ति है प्रेम ही सृजन
 सुख दुख में भ्रान्त्य वहाँ !

प्रेम दृष्टि में कर भवगाहन
 बनो भीत प्रणयी फिर पावन,
 वहाँ हृदय में भगन, स्वाति घन,
 बरसेंगे हो बिबस वहाँ !

प्रेमी के आँसू के हों घन
 प्रेयसी की स्मृति के बिद्युत् क्षण
 फिर अतृप्ति की उर में गर्जन,
 विरह मिसन बन जाय महा !

(५)

युवक

तुम आती हो तो आओ, प्रेयसि, आओ,
 जीवन-पथ में सौन्दर्य किरण बरसाओ !

यह सब है, सूना प्रेम बिना जग जीवम,
 नरनारी उर का प्रणय धाव कटु बधन
 तुम छाया नारी से मानवी कहाओ !

तुम विरह मिसन से मुक्त प्रणय बन आना,
 तम भोति रहित, मय जीवम को घपनाना,
 निज हृदय माधुरी में जग को नहसाओ !

तुम सुखन शक्ति बन मेरे उर में गाना
तुम धिरप्रतीति बन जन मन में धुल जाना
प्राणों में स्वर्गिक सौरभ मधुर बसाओ !

जन एक प्राण दो देह अभिन्न हृदय हों
प्रत्यय हो मन में संशय नहीं उदय हो
उर की उर, जीवन की जीवन बन जाओ
तुम भाती हो तो धाओ प्रेयसि धाओ !

युवती

मैं भाती हूँ जीवन भाती हूँ प्रियतम
हृदयों का प्रम प्रकाश नहीं तन का तम
तुम खोल हृदय पट प्रिय फिर मुझे बुसाओ
युवक—तुम धाओ मानसि धाओ प्रेयसि धाओ !

प्रिय मैं ही सीता मैं सावित्री राधा
हरती आई जग जीवन पथ की बाधा
पा मातृ शक्ति जन मगन, प्राण ममाओ !

युवक—धाओ हे आभा देही देवी धाओ !

मैं मार्गी, घोषा सूर्या अदिति प्रवीणा
भारती मामती मस्ती खना मयीना
जन जन के उर में तुम धाहान उठाओ !

युवक—धाओ हे, युग की दिव्य विभा बन धाओ !

मैं दुर्गा सटमी कासी पावन करणा
मैं भक्ति शक्ति सौम्य माधुरी कदना

हरी बाजुरी गुनहरी टर

तम का बिनाश, युग का निर्माण कराओ !
 युवक—आओ हे जग जीवन प्राप्ति तुम प्राप्ति !
 कब से मुक्त पर घर सज्जा का प्रयगुलन,
 मैं बनी मनुज की मोह वासना की तन
 मैं तुम्हें शक्ति देती व्यवधान हटाओ,
 युवक—आओ, उभा धन, धनधगुल्लि, प्राप्ति !

तीव्रतया

(६)

युवती

मैं आई, फिर प्रियतम, आई !
 युग-युग के क्यों की मेरी
 देखो तुम छिपती परछाई !
 तुम क्या नर थे, मैं क्या नारी,
 बधू मचीना, पति अधिकारी
 तुमने मेरी फूल देह पर,
 तप्त सालसा सेब सजाई !

मैं मानवी प्राण जन प्राप्ति,
 मानव सहचरि जीवन प्राप्ति,
 भीत न होओ, प्रिय, धन नारी
 मेरी जागृति की भोगदाई !

मुझको धन नारी तन धोना
 देह मोह निज तुमको खोना,

हरी बाँधुरी गुनहरी टेर

तुम सृजन शक्ति बन मेरे उर में गाना
तुम चिरप्रतीति बन जनम में पुन जाना
प्राणों में स्वर्गिक सौरभ मधुर बसाओ !

जन एक प्राण, दो देह अभिन्न हृदय हों
प्रत्यय हो मन में संशय नहीं उदय हो
उर की उर जीवन की जीवन बन जाओ
तुम भाठी हो तो धाओ प्रेयसि धाओ !

युवती

मैं धाती हूँ जीवन धाती हूँ प्रियतम
हृदयों का प्रेम प्रकाश नहीं तन का तन
तुम जोस हृदयपट प्रिय फिर मुझे बुलाओ

युवक—तुम धाओ मानसि धाओ प्रेयसि धाओ !

प्रिय मैं ही सीता मैं सावित्री राधा
हरती आई जग जीवन पथ की बाधा

पा मातृ शक्ति, जन मंगल प्राण मनाओ !

युवक—धाओ हे धामा देही देवी धाओ !

मैं गार्गी घोषा सूर्या अदिति प्रवीणा
भारती मासती मत्सी सना नबीमा

जन जन के उर में तुम आह्वान उठाओ !

युवक—धाओ हे, युग की दिव्य विभा बन धाओ !

मैं दुर्गा सरस्वी कामी पावन करणा
मैं शक्ति शक्ति सौन्दर्य माधुरी करुणा

हरी बासुरी तुमहरी डेर

तम का विनाश, युग का निर्माण कराओ !
 युवक—आओ हे, जग जीवन प्राप्ति तुम प्राप्ति !
 कब से मुख पर घर सज्जा का ध्वजगुलन,
 मैं बनी मनुज की मोह वासना की तन,
 मैं तुम्हें शक्ति देती व्यवधान हटाओ,
 युवक—आओ, ऊँचा बन, धनवगुलित, प्राप्ति !

तीसरा वृत्त

(६)

मुवती

मैं आई, फिर प्रियतम, आई !
 मुम-मुम के रूपों की मेरी
 देखो तुम छिपती परछाई !
 तुम क्या नर वे मैं क्या नारी,
 बंधू प्रचीना, पति अधिकारी
 तुमने मेरी फूल देह पर,
 उल्ट साजसा सेज सजाई !

मैं मानवी आज बन प्राप्ति,
 मानव सहचरि, जीवन छाप्ति,
 भीत न होओ, प्रिय, अब नारी
 मेरी आगुति की ध्वजगुलन !
 मुझको अब नारी तन मोना,
 देह मोह मित्र तुमको छोना,

हरी बागुली गुनहरी देर

मैं यदि फिसलूंगी युग पथ पर
प्रिय, तुम होमे उत्तरदायी !

सिसका धाब देह की छाया
आभा पुन बनेगी माया
संस्कारों की श्रंति धरा पर
स्वर्ण छाति साएगी स्वायी !

युग-युग के रूपों की मेरी
देखो, प्रिय, छिपती परछाई !

(७)

सीता राम सीता राम
वया नाम है प्रणाम !

हम नर छाया, कुल नारी,
पतिव्रता, पति की प्यारी
गृह दासी, सुत महतारी
कसह प्रबिद्या औभियारी !

लज्जा सज्जामय गुण प्राम,
सीता राम, सीता राम !

अब घर से बाहर जाती
सूर्यमुखी सी कुम्हलाती
देख जनों को सकुचाती
नयन सासना सकसाती !

करतीं नित घर के सब काम,
सीता राम, सीता राम !

युग-युग से हम प्रबगुठित,
मूह की दीप शिखा कम्पित
देह मोह में ही सोमित
पुख्य मात्र से प्राप्तकित !
बिधि सदब से हम परबाम,
सीता राम, सीता राम !

कौन जगाता हमें स्वजन
उर के तम में भर कम्पन,
दबा रात में पावन कण
उसे जगा द आज पवन !
प्रभु प्रबसा का लें कर बाम
सीता राम, सीता राम !

(८)

राखे स्याम, राखे श्याम,
विदव रूप हे ससाम !

घाई थी एक बार
हम तन मन प्राण बार
सुन मधु मुरली पुकार
छोड़ गेह गेह द्वार,

हरी बांगुरी पुनहरी डेर

तम निज सब काज काम,
राखे स्याम राखे स्याम !

यमुना की कम तरंग
वनी अपस मृकुटि मंग
धंग-धंग में उमंग
मृत्यु गीत रास रंग,
मधुरों पर मधुर नाम
राखे स्याम राखे स्याम !

बही गीति काव्य भार
रस के निर्झर अपार,
संस्कृति वह भी उबार
जीवन वा नहीं भार,
जन मन थे पूर्ण काम
राखे स्याम राखे स्याम !

निखिल मायिका लसाम
हम प्रज की रहीं बाम,
प्रीति रीति में प्रकाम
बिकी बँधी बिना शम
मधुर भाव में प्रकाम,
राखे स्याम राखे स्याम !

कौन मान यह कुमार
करता फिर से प्रचार,
किसलिए कुसीन मार
करे फिर धरामिसार ?

ऐसा वह कौन काम,
राधे द्याम, राधे द्याम !

(६)

बुद्ध की धारण,
धम की धारण,
संघ की धारण ।

इच्छा मानव दुःख का कारण
इच्छा का यदि करें निवारण
तो जग जीवन हो फिर पावन
धर निर्वाण मिसे अब तारण ।

बुद्ध की धारण,

सेवा ही हो जीवन का व्रत,
सेवा ही में हो जीवन रत,
सेवा हित जो हो मस्तक नत
बोधिसत्व के मिसे सुधि धरण !

बुद्ध की धारण

तज निज सब काज काम,
राखे स्याम राखे स्याम ।

यमुना की कस तरंग
बतीं बपस मुकुटि भग
धग-धग में उमंग
नृत्य गीत रास रंग,
अधरों पर मधुर नाम
राखे स्याम, राखे स्याम ।

बही गीति काव्य धार
रस के निर्झर अपार
संस्कृति बहू भी उधार
जीवन या नहीं मार,
जन मन थे पूर्ण काम
राखे स्याम राखे स्याम ।

निखिस नायिका ससाम
हम ब्रज की रहीं वाम,
प्रीति रीति में प्रकाम,
बिकी बँधी बिना दाम
मधुर भाव में प्रकाम
राखे स्याम राखे स्याम ।

कौन मान यह कुमार
करता फिर से प्रचार,
किसलिए कुलीन मार
करे फिर धराभिसार ?

ऐसा वह कौन काम,
राधे द्याम राधे द्याम !

(६)

बुद्ध की धरण,
धर्म की धरण
सद्य की धरण ।

इच्छा मानव बुद्ध का कारण,
इच्छा का यदि करें निवारण
तो जय जीवन हो फिर पावन
धिर निर्वाण मिले सब तारण ।

बुद्ध की धरण

सेवा ही हो जीवन का सत,
सेवा ही में हो जीवन रत,
सेवा हित जो हो मस्तक नत
बाधिसत्य के मिले सुधि धरण !

बुद्ध की धरण,

जीव मात्र पर बरसे करुणा,
 मामक घर में हरसे करुणा
 सेवा के हित घरसे करुणा,
 मिटें शोक सब जन्म रुख मरण !

बुद्ध की धरण,

छोड़ो हे मिथ्या माया जग
 रोग बरा भय मृत्यु के विह्वल
 पकड़ो भिक्षु भिक्षुणी का मग
 जीवन की भय भीति हो हरण !

बुद्ध की धरण

किन्तु उच्छ्वसित हो रह रह मन
 प्राणों में भरता क्यों क्रन्दन,
 स्वप्नाकुल क्यों होते सोचन,
 भिक्षु, ज्ञात क्या तुमको कारण ?

बुद्ध की धरण,

धर्म की धरण,

सब की धरण !

जीवा वृक्ष

(१०)

नेपथ्य गीत

जीवन में जितना दूयोगे उतना ही तुम चकताओगे,
 मधु में सिपटा कर पेख मधुप, फिर सहज नहीं उड़ पाओगे !

सुख को तुम्हा बनतो विपाद सुख दुख में जो तुम धीर रहो,
दुख में तुम रुकना सीखोगे प्रिय, सुख में चरण बढ़ाओगे !

जो सहज तैर सेते जग में, आगे बढ़ पार बही पाते,
तुम ऐसे नासना रंग में जो, गेरुवा पहन के जाओगे !

आसक्ति विरक्ति अकेले ही घूँघट पट नहीं उठाएगी,
जो निरत हुए पछताओगे, जो विरत हुए क्या पाओगे ?

रति और विरति के पुसियों में बहती जीवन रस की धारा
रति से रस सोगे और विरति से रस का मूल्य लगाओगे !

नारी में फिर साकार हो रही नभ्य चेतना जीवन की
तुम त्याग भोग का सूजन भावना में फिर नवल बुझाओगे !

(११)

स्व शिक्षा

आधुनिका !

फूलों की तन-सुवास,
सहरों का चरण सास
शक्ति का मधु सुधा हास
विष्णु का भ्रू विमास
स्व शिक्षा !

भास पर न बेदि सुभर
माँग में न सेंदुर बर

इसे बाँधुरी मुनहरी देर

जीव मात्र पर धरते करुणा,
मानव सर में हरसे करुणा,
सेवा के हित तरसे करुणा,
मिटें शोक सब जम दम भरण !

बुद्ध की शरण,

छोड़ो हे मिथ्या माया जग
रोग जरा मय मृत्यु के विहग,
पकड़ो भिक्षु भिक्षुणी का भग
जीवन की मय भीति हो हरण !

बुद्ध की शरण,

किन्तु उच्छ्वसित हो रह रह मन
प्राणों में भरता क्यों कंदन
स्वप्नाकृत क्यों होते सोचन
भिक्षु, ज्ञात क्या तुमको कारण ?

बुद्ध की शरण,

जर्म की शरण

सभ की शरण !

जीवा नृप

(१०)

मेघदूत गीत

जीवन में जितना डूबोगे उतना ही तुम उकसाओगे,
मधु में सिपटा कर पंख, मधुप फिर सहज नहीं उड़ पाओगे !

सुख की तृप्ति बनती विषाद, सुख युक्त में जो तुम घीर रहो,
दुःख में तुम रुकना सीखोगे, प्रिय, सुख में चरण बढ़ाओगे !

जो सहज तैर लेते जग में, घागे बड़ पार वही पाते,
तुम ऐसे सामसा रंग में जो, गेरुवा पहन के जाओगे !

आसक्ति विरक्ति अकेले ही धूँधट पट नहीं उठाएंगे,
जो निरत हुए पछताओगे, जो विरत हुए क्या पाओगे ?

रति और विरति के पुमिनों में बहती जीवन रस की धारा,
रति से रस भोगे और विरति से रस का मूल्य लगाओगे !

नारी में फिर साकार हो रही नभ्य जेतना जीवन की
तुम त्याग भोग को सुखम सावना में फिर नवस डुबाओगे !

(११)

रूप शिक्षा

आधुनिका !

फूलों की छन-सुवास,

महलों का चरण साध

राशि का मधुसूधा हास

विद्युत् का जू बिसास

रूप शिक्षा !

भास पर न भेँवि सुपर

माँग में न सेंदुर बर

हरे बाँसुरी कुनहरी डेर

जीव मात्र पर धरसे करुणा,
मानव छर में धरसे करुणा,
सेवा के हित तरसे करुणा,
मिटें छोड़ सब जन्म रुख मरण ।

बुद्ध की शरण,

छोड़ो हे मिथ्या माया जग
रोग जरा भय मृत्यु के बिहग,
पकड़ो भिक्षु भिक्षुणी का मग
जीवन की मय भीति हो हरण ।

बुद्ध की शरण,

किन्तु उच्छ्वसित हो रह रह मन
प्राणों में भरता क्यों कंदन,
स्वप्नाकुस क्यों होते सोचन
भिक्षु, ज्ञात क्या तुमको कारण ?

बुद्ध की शरण

जर्म की शरण

सम की शरण ।

श्रीमद्भगवद्गीता

(१०)

नेपथ्य गीत

जीवन में जिसना खूबोगे उतना ही तुम उकठाओगे,
मधु में सिपटा कर पंख, मधुप फिर सहज नहीं उड़ पाओगे ।

सुख की तृष्णा बसतो विषाद सुख दुःख में जो तुम धीर रहो,
दुःख में तुम रुकना सीखोगे, प्रिय, सुख में चरण बढ़ाओगे !

जो सहज तैर भेते जग में, आगे बढ़ पार वहीं पाते,
तुम रंगे सामसा रंग में जो, गेरुआ पहन के जाओगे !

आसक्ति विरक्ति अकेले ही धूमट पट नहीं उठाएंगी,
जो निरत हुए पछताओगे, जो विरत हुए क्या पाओगे ?

रति और विरति के पुनिनों में बहती जीवन रस की धारा,
रति से रस लोगे और विरति से रस का मूल्य समझाओगे !

मारी में फिर साकार हो रही नभ्य बेतना जीवन की
तुम त्याग भोग का सुजन भावना में फिर नवल बुझाओगे !

(११)

रूप शिखा

प्राप्तिनिका !

फूसों की तम-सुवास,
सहरो का चरण लास
शक्ति का मधुसूधा हास
विद्युत् का झू बिसास
रूप शिखा ।

माल पर न बेदि मुषर
भोग में न सेंकुर बर

इसे बामुदी मुकहरी टेर

रैगतीं हम मधुर प्रघर
 भ्रू धनु में कज्जल भर ।
 प्राधुनिका ।

छूट गई पट सस्कृति
 हृदय रहित मधुराकृति,
 वे रहीं प्रगति को गति
 हम नव युग की भारत
 रूप शिक्षा ।

मुबक

सोमा का है प्रिय तन
 मुक्त नहीं तन से मन
 प्रिये, धीर धरो करण
 रिक्त क्या न यह जीवन ?
 प्राधुनिका ।

घाई घर से बाहर,
 बकाचीय मयनों पर
 छोड़ मध्य युग की डर
 मामूली बनी न निखर ।
 रूप शिक्षा ।

तुम भी भारत महिमा
 आज जस युग प्रतिमा ।

सुम में क्या उर गरिमा ?
 केवस तम की सधिमा !
 प्राधुनिका !

(१२)

हम प्रीति शिक्षा
 अति प्राधुनिका
 पथ रहीं दिखा ।

हम गोरी भोरी प्रिय परियाँ
 हम अस्तावस की अप्सरियाँ,
 मधु मुक्तरप्रणय की निर्भरियाँ,
 हम नव युग ज्योति उजागरियाँ,
 हम प्रीति शिक्षा ।

हम पकी लिखीं नव नागरियाँ
 गोरस न, सुरा की गागरियाँ
 हम नहीं गृहों की वाकरियाँ,
 हम मृत्यु निपुण गुण आगरियाँ,
 अति प्राधुनिका ।

भगों पर बेतीं विरल वसन
 जिससे विमुक्त निहारे यौवन
 हम सोइ प्रणय के कटु बधन,
 मोहित करतीं जन-जन के मन
 हम प्रीति दिखा ।

तन पर न हमारे भबगुठन
 घर हाथ पकड़ सेतीं हम मन,
 मिसतीं सब से कुल के गोपन
 क्या हम आदर्श नहीं स्वी जन ?
 प्रति आधुनिका !

मुबक

प्रिय सखि, तुम पूरव में धार्म
 पर तनिक नहीं जागृति साह
 से फूल बिहग की सुषराई,
 तुम बिगब स्वप्न में भलसाई
 भवि प्रीति शिक्षा !

तुमको प्रिय प्राणों का जीवन
 प्रति मरा स्नायुओं में स्पर्दन
 तुम हो युग जीवन की रूप
 यह प्रगति नहीं री कपल करण,
 प्रति आधुनिका !

बाँचवाँ दृश्य

(११)

नेपथ्य गीत

धारदे !

धारख हासिनी

तम विनाशिनी, जग प्रकाशिनी,

नव स्मिति की ज्योत्स्ना बरसाओ
बसुंधा पर, जीवन विकासिनी !
घारदे !

नवल नीसिमा से नव अंबर,
निर्मल सुख से कंचित सरि सर,
उतरो हे आभासयि मू पर,
कुमुद आसनी !

शुभ्र चेतना सी नव विखरो,
भाव सहारियों को छू निखरो,
पृथ्वी के तूण-तूण पर बिखरो
ज्योति लासिनी !

स्वप्न जड़ित मू रज हो चेतन,
तन से ज्योत्स्ना सा छिटके मन,
दुम तारा से भरें नव किरण
हृदय वासिनी !

आओ नव नारी बन आओ,
जग को सोमा में लिपटाओ
नव जीवन की सुभा पिसाओ
श्री बिलासिनी !

(१४)

मेघध्वज गीत

ताराओं सी धुवि धारमाएँ मैं आज धरा पर भेजूँगी,
मम भाव शक्तियों से मू को मैं फिर से सहज सहेजूँगी ।
मैं ही खोई अप के सम में, मैं ही लत रंगों में जगती
मैं नर नारी में आज बिचा हो जीवन के भुज भेदूँगी !
जो जन मन आज सठे ऊपर मैं फिर धरती पर उतरूँगी
मानव के उर में कर प्रवेश जग में नव जीवन वितरूँगी ।
तो, आज तुम्हें छूँती हूँ मैं अपने आभा के अक्षर से
मानव के स्वर्णिक स्वप्नों को मैं जीवन की देही दूँगी ।

छठा वृत्त

(१५)

युवक

मानिनि, अधिक बिसम्भ मत करो !
जो मानव की स्वर्णिम मानधि
उतरो अब धरती पर उतरो !

युवती

प्रिय मैं उतर धरा पर आई !
उदय क्षितिज पर नव युग का अब
देखो स्वर्ण ध्वजा फहराई !

युवक

मिथिल सृष्टि की धन तुम आश्रय
जीवन की सकल्प असशय
प्रथम की चिर अभिसाया
सृजन सत्त्व की सार बन प्रणय,
युग युग के जग जीवन के
चिर ज्ञान कला से प्रयत्न निष्ठरो !
मानव की प्रिय मानसि, विचरो
तुम फिर से धरती पर बिचरो !

युवती

मानव तर की आशा के पर
जीवन के स्वप्नों का तन धर
सृजन खेतना सी सदेह तुम
तर में मधुर प्रतीति बन भर

आज सृजन आनन्द से उमंग
मैंने जीवन रख सिपटाई !
पुनः सूक्ष्म से स्पृष्ट बनी मैं
छिपी ज्योति में सब परछाई ।

प्रिय, मैं उतर धरा पर आई ।

हरी बाँसुरी गुनहरी डेर

सातवीं श्रृंगार

(१८)

युवती

धिक हम कैसे प्रेम अधिक !
प्रीति सूत्र में बँध कर जो हम
बन सकते भू के न धमिक !

प्राप्ति, भू को प्राज बुहारें
युग युग का मध कदम म्हारें,
जीवन का गृह प्रथम सर्वारें
जन भ्रम से क्षोभित हों विक !

किया नहीं सौंदर्य सुवन जो
किया नहीं माधुर्य वहन जो
रे किस लिए मनुष्य जीवन जो
जन में नहीं विभव आत्मिक !

पिया नहीं जो जीवन मधु दुख
मिसा न जो भू रचना में सुख
तो क्यों सर नारी हो उन्मुक्त,
युग्म प्रीति के रिक्त रसिक !

प्रिय तुम बीज—प्राण तुम भरतो
मंजुर सी उठ सृष्टि निखरती

जीवन हरियासी मन हरी
प्रीति हमारी नहीं क्षणिक !

घामो, भरो धरा पर प्लावन
स्वेद सिक्त धम का चिर पावन
मुग्ध प्रीति का विस्तार जागरण
गावें मुक्त पिढी नव पिक !

(१६)

युवक युवतिर्मा

प्रतीति प्रीति प्राण में
चरण धरो चरण धरो
सिए हो हाथ हाथ में,
न तुम डरो न तुम डरो !

मनुष्यता रही पुकार
छोड़ देह मोह मार
सोस रुख हृदय द्वार
देह मोह को बिसार !

मास के कसक पक
को मनुष्य के हरो !

महान् प्रीति प्राण हा,
प्रसन्न राम राम हो

हरी बाँसुरी सुनहरी टेर

अभीष्ट लोक काज हा,

सुसम्य जम समाज हो।

उठो, सदुष्ण ध्येय, धैर्य

शीर्य, भीर्य को करो।

न रक्तपात युद्ध हो

न कर्ष्य शक्ति रद्ध हो

मनुष्य शुद्ध बुद्ध हो

विवेह मम न कूट हो,

अमय अमर हो मृत्यु आज

साथ साथ जो मरो।

क्षुधार्त रे अर्धस्य प्राण

मग्न वेह बुद्धि म्लान,

रोग व्याधि से न जाण,

निदधय लो आज जान,

तुम प्रथम मनुष्य हो

न युग्म मात्र स्त्री नरो।

बिनम सिष्ट निरभिमान

पुरुष नारि हों समान,

प्रीति प्राण, मुक्त ज्ञान,

मुक्त कला नृत्य गान

स्वर्ग तुल्य हो धरा,

अधन्य रुद्धिपो करो।

(२०)

मय युवतियाँ

ये पारिजात प्रिय पुष्पन के
ये आभ्र और धमिर्नदन के
ये सित सरोज पावन मन के
अपसक गुलाब प्रेमी जन के

यह संस्कृति का संदेश नवस
तुम ग्रहण करो तुम ग्रहण करो !
यह छास्ति सम्पत्ता की प्रियतम
तुम ग्रहण करो तुम ग्रहण करो !

भीनी अपा नव भावों की
यह जुही सुषर रुचि चारों की
मृदु सीतमयी प्रिय मौलसिरी
उर गरिमा से कस्तकी मरी

तुम स्नेह वया सहृदयता से
जन मन की ईर्ष्या पूजा हरो !

ये बला की कलियाँ स्मृति की
यह कूद कसी निबछस स्मिति की
स्मित आरु चमेसी सज्जा की
मय धुईमुई प्रिय सज्जा की

हरी बागुटी पुनहरी हरे

तुम नव जीवन की थी घोमा,
सुख आशा वमव आज करो !

मंजरि धशोक की मगसमय,
रोमिल शिरीष घोमा में लय
ये हँस हँस भरते हर सिंगार,
यह पुलकाकुल कचनार डार
तुम विलय साधना सत्य त्याग से
भू बाधाए निश्चित हरो !

स्वप्नों की कई मधुर मोहन
पाटल बिराग से गैरिक तन
कामिनी सती सी स्वच्छ सुधर,
स्वर्णिम गेंदा सतोष अमर !
नव मानवता की सौरभ से
तुम बसुंधरा को आज करो !

ये पौख्य से रक्षित पलाश
ये स्वयं शांति के अमलतास
मालती भरी उर ममता से,
सुर चंदन सौरभ अमठा से,
मानव जीवन के योम्य बना
इस पृथ्वी को मानव बिचरो !
यह संस्कृति का संदेश नवम् ।

युवक—प्रतीति प्रीति प्राण में
भरण धरो, भरण धरो !

युवतियाँ—हृदय सुमन प्रणय सुरभि
ग्रहण करो ग्रहण करो !

युवक—सिए हो हाथ हाथ में
न तुम डरो न तुम डरो !

युवतियाँ—सुजन विकास की दिक्षा
बहन करो बहन करो !

सुम नवजीवन की श्री शोभा
मुख आशा वैभव आज करो !

मंजरि अशोक की मगसमय
रोमिल शिरीष शोभा में लय
ये हँस हँस झरते हर सिंगार,
यह पुष्पाकुल कपनार झार
सुम विलस साधना सत्य त्याग से
मू बाधाएँ निश्चित हरो !

स्वप्नों की कूर्च मधुर मोहन,
पाटल विराग से गैरिक ठन
कामिनी सती सी स्वच्छ सुधर
स्वर्णिम मेवा सतोष अमर !
नव मानवता की सौरभ से
सुम वसुंधरा को आश भरो !

ये पौरुष से रक्षित पसाध
ये स्वर्ण छाँति के अमलतास
मासली मरी उर ममता से,
सुर चंदन सौरभ समता से
मानव जीवन के योग्य बना
इस पृथ्वी को मानव बिचरो !
यह सस्कृति का संदेश मयल !

युवक—प्रतीति प्रीति प्राण में
वरण धरो वरण धरो !

युवतियाँ—हृदय सुमन प्रणय सुरभि
ग्रहण करो ग्रहण करो !

युवक—सिए हो हाथ हाथ में
न तुम डरो न तुम डरो !

युवतियाँ—सूजन विकास की शिक्षा
वहन करो वहन करो !

स्मृति

परित्यक्ता बदेही सी ही
अब हृदय कामना उठी निखर
प्राणों की ममता, अथु स्नात
कुछ, धरद शुभ्र सगती सुंदर !

प्रेमसि की मुक्त छवि मेष मुक्त
छवि रेखा सी उगती मन में
नीरव नम में विद्युत् धन सी
एकाकी स्मृति जमसी क्षण में !

ज्योत्स्ना में अम्र से कपित
हलकी फुहार सी पड़ती भर
बह भीगी स्मृति, मानस घट पर
छाया सहरी सी बिखर-बिखर !

सुख दुःख की सपनों में सिपटी,
भू के अंधारों पर पल धर,

वह बढ़ती स्वप्नों के पथ पर
सत अग्नि परोक्षार्ण दे कर !

अब प्रेमी मन वह नहीं रहा
ध्रुव प्रेम रह गया है केवल,
प्रेयसि स्मृति भी वह नहीं रही
भावना रह गई बिछोड़वस ।

बाहर जो कुछ भी हो बसना
मम का पट बस गया भीतर
विकसित होती बेतना तपस्व
परिवर्तन वय धीमन का सगर ।

मधु गीत

नव वसंत क्या लाया !
प्राणों की घाटी में फिर
फूलों का पावक छाया !

सुन कोयल का बाहुक कूजन
मधुपों का उमावक गुजन
स्वप्नों ने अंतर मर्मर भर
कैसा गीत धगाया !

रंग रंग की इच्छाएं हूँस हूँस
मन को पागल करतीं बरवस
पग-पग पर सकती मैं उन्मन
किसने मुझे सुभाया !

धिरते धाज खित्तिज में क्यों घन
सौरभ के, भावों के मादन

वस वसत के नम में मंथर
सावन क्यों घिर आया ?

घाघरों में नव कसियों की स्मित,
पलकों में स्मृति की ऊर अभिविधित
मम समीर के पलों में
उर में समुद्र सहजया ?

भाव स्मृति

वन फूलों की तरह डाली में
गाती ग्रह निर्दय गिरि कोयल
कासे कौघों के बीच पसी
मुँहबली प्राण करती बिह्वल ।

कोकिल का ज्वासा का गायन
गायन में भर्म व्यथा मादन
उस मूक व्यथा में लिपटी स्मृति,
स्मृति पट में प्रीति कला पावन ।

बह प्रीति-मुम्हारी ही प्रिय निधि
निधि, फिर शोभा की । (जो अनन्त
कल क्लृप्तियों के धर्मों में बिस
बनती रहती जीवन वसन्त ।)

उस शोभा का स्वप्नों का तन,
(जिन स्वप्नों से विस्मृत लोचन ।

जो स्वप्न मूठ हो सके नहीं,
मरते उर में स्वर्णिम गुजन !)

उस तन की भाषा द्रवित आकृति,—
(जा धूपछाह पट पर अंकित !)
आकृति की खोई सी रेखा
सहरों में बेसा सी मग्नित !

जीवन बेसा बहु स्वप्न सिन्धी,
छवि रेखाएँ जिसमें ओम्भल,
तुम अतर्मुख घोमा धारा
घहती अब प्राणों में सीतल !

प्राणों की फूसों की बाली
स्मृति की छाया मधु की कोयल
यह गीति व्यया अतर्मुख स्वर
बहु प्रीति कथा धारा निश्छल !

माधव रूप

गंध धामित ।

कद तुम धार्ष्ट्य अदृश्य

हृदय कृञ्ज छत्र धामित ।

सूक्ष्म सुरभि रे धामाम,

पुलकित मन, तम सकाम,

अश्रुत संगीत मंत्र

रोम रंघ में भङ्गित ।

ध्यान मीन प्रीति कृञ्ज,

सन्निधि मधु गंध पुञ्ज,

कनक चिन्ता तुम अकंप

छत्र प्रदीप में स्थित नित ।

स्पर्श सखित हृष्य स्रोत,

निश्चेयस् ओतप्रोत,

धोमा की पुष्प वृष्टि

वृष्टि-सूक्ष्म सुरबन्तु स्मित ।

मानव तर मीह भग्न
 बाह्य रूप राशि सम्य
 व्यर्थ रूप जो अरूप
 सत्य ज्योति स्पर्श रहित !

तुम्हें देख मुदि मन
 अतस् में तुम गहन
 सत्य वही जिसमें तुम
 भाव रूप अभिव्यंजित !

भाब रूप

गद्य अमित ।

कव तुम आई प्रबुद्ध

हृदय कृञ छद अमित ।

सूक्ष्म सुरभि रे अनाम,

पुस्तकित मन, तम सकाम,

अधुत संगीत मंत्र

रोम रंग में भंगत ।

ध्यान भीम प्रीति कृञ

सन्निधि मधु गंध पुञ

कनक सिखा तुम अकप

उर प्रदीप में स्थित नित ।

स्पर्श सवित हर्ष स्रोत

निश्चेयस् अतप्रोत

शोभा की पुष्प वृष्टि

वृष्टि-शुभ्य सुरजनु स्मित ।

भाग्य उर गीह मध्न
 बाह्य रूप राशि लभ
 व्यर्थ रूप, जो अरूप
 सत्य ज्योति स्पर्श रहित !

तुम्हें देख मुदि नयन
 अंतस् में खुले महन
 सत्य वही जिसमें तुम
 भाग्य रूप अभिव्यंजित !

भाव रूप

गंध धर्मित ।

कव तुम आई अवस्थ
हृदय कृज छत्र धनित ।

सूक्ष्म सुरभि रे अनाम,
पुस्तकित मन, तन सकाम,
अमृत संगीत मद्र
रोम रस में मद्रुत ।

ध्यान सीत प्रीति कृज
सन्निधि मधु गंध पुंज
कमल शिखा तुम अकप
छत्र प्रदीप में स्थित नित ।

स्पर्श सखित हर्ष स्रोत
निःशेष्य ओतप्रोत
छोमा की पुष्प वृष्टि
वृष्टि-शून्य सुरबनु स्मित ।

मानव तर मीह मम
 बाह्य रूप राखि सज्ज
 व्यर्थ रूप, जो धरूप
 सत्य ज्योति स्पर्श रहित ।

तुम्हें बेस भुंदि नयन
 धंठस् में सुने पहन
 सत्य वही जिसमें तुम
 भाव रूप अभिव्यजित ।

मनोभव

पावक की झैसियाँ बजातीं
गानों की जल बीजा,
मौन हृदय तभी से करता
कौन पुख्त रस ऋद्धि ?—
प्राणों को भाया !

प्राण ध्यान के धर से हँस
प्रेम उतर आया—

जीवन शोभा का रस उत्सव
धर में भर स्वर्णम मधु रस
उदय हुआ नव रूप मनोभव
रोम हर्ष छाया !

सुख दुःख भय का भ्रत न उद्वम,
रश्मि प्रकाश में भी शोपन तप

अगी ज्योति मानस में निर्भ्रम
कनक गौर काया !

पावक प्रम प्रेम जस वीणा,
कसा हुई रस सिद्ध प्रवीणा —

उज्ज्वल समस कसुप का आनन,
जड़ उर में जाया नव बेसन
पूर्ण हुई जन भू उसको पा
वह प्रकाश-छाया,
प्राणों को भाया !

पुनर्मुल्यांकन

इंद्रिय सुख से रहित मान मानव आत्मा को
बना गए तुम जीवन को मरुस्थल
भासाकासा को मृगजल !

काम दग्ध है क्या सोचा तुमने ?—धर्मगत बल
खोस न पाए काम यदि तुम मुक्त न कर पाए
निज निर्मम इंद्रिय कुठित प्राण क्षुधित
प्रवृत्त !

उदर क्षुधा की स्वीकृति दे, अथ धर्म भित्ति पर
जल समाज का उठता जल प्रसाद —
अस्ति पंजर स्फटिककोश्वस !

काम उपेक्षित युगों युगों से, मनुष्योचित संस्कार
न कर पाया पशु स्तर पर कसृप पंक में सना
वासना निह्वस !

इंद्रियविह तुम ? बिक अवोध ! तन मन प्राणों से
स्वर्णिम आत्मा को विमला कर

स्वयं दीन को घरती से कर बचित,—

नष्ट हुए विघातकार में मटक स्वयं तुम,
सन मन इक्षिय धार्मिक पोषण रहित
पुण्य स्तवकों-से कुम्हसा, हुए घबिघा सम दूषित,—
जबर, बीबन-मृत !

बन्य भारत द्रष्टा क्षप्टा की सुबन कसा का
पी न सके तुम स्वच्छ विषय मधु,
आनन्दामृत !

ताप हीन कर रवि प्रकाश को,
प्राप हीन मानव आत्मा को,
ब्रह्म रंघ से मुक्ति क्षुब्ध में
सम कर गए निष्कल सुठित,—
भीर्न वस्त्रवत्,
देह प्राप मन स्पष्ट कलकित !

निश्चय ही धुर्यसमर जन मय के सम्मुख,
मानव आत्मा को बाधत हो
भीतर से होना नव दीपित
बाहर से विस्तृत, नव विकसित !

मिट जाए धिर का कसक (भीतर धर्मार्थ है मर्त्य !)
मुक्त हो काम ब्रह्म से (काम दासता ओ !)
मानव पाए स्वरूप निज,

इति संपूर्ण मुनहरी देर

पुनर्मुल्यांकन

इंद्रिय सुख से रहित मान मानव आत्मा को
बना गए तुम जीवन को मरुपल
आशाकांक्षा को मृगजस !

काम दग्ध है क्या सोचा तुमने?—असंग बन
खोस न पाए काम यदि तुम, भुक्त न कर पाए
निज निर्मम इंद्रिय कृच्छित प्राण क्षुधित
अतस्तप्त !

उबर क्षुधा को स्वीकृति दे अब अर्ध भित्ति पर
जन समाज का उठता जड़ आघात —
अस्मि पंजर स्फटिककोज्जस !

काम उपेक्षित युगों युगों से, मनुजोचित घस्कार
न कर पाया पशु स्तर पर कसूप पक में सता,
वासना विह्वल !

इन्द्रियजिह्वा तुम ? थिक अवोध ! तम मन प्राणों से
स्वर्णिम आत्मा को विसर्गा कर

स्वर्ग बीज को भरती से कर वसित,—

नष्ट हुए विधांसकार में भटक स्वयं तूम,
तब मन इन्द्रिय आत्मिक पोषण रहित
पुष्प स्तवकों-से कुम्हसा, हुए भविष्य ठम धूपित,—
जजर, जीवन-मृत !

धन्य आत्म द्रष्टा, स्रष्टा की सुजन कला का
पी न सके तूम स्वच्छ विषय मधु,
आनन्दामृत !

ताप हीन कर रवि प्रकाश को,
प्राप हीन मानव आत्मा को
बहु राग से मुक्ति घूम्य में
उमर गए निष्कल सुठित,—
जीर्ण वस्त्रवत्
देह प्राण मन स्पर्श कलकित !

निदबय ही दुर्घर्ष समर जन युग के सम्मुख,
मानव आत्मा को जाग्रत हो
भीतर से होना नव बीजित
बाहर से विस्तृत नव विकसित !

मिट जाए धिर का कसक (भीतर अमर्त्य है मर्त्य !)
नुकल हो काम द्रोह स (काम वासता ओ !)
मानव पाए स्वरूप निज,

तम मम प्राणों से ज्योतिष,
नक्षत्र शिक्षा संयोजित !

स्वीकृत कर सम्पूर्ण प्रकृति को, पूर्ण मनुष्य को
फिर से हो जीवन पदार्थ का, मनोद्वन्द्व का
स्थूल सूक्ष्म का सागर मंथन,
नव मूल्यांकन !

निश्चेतन उपचेतन मुखों को दीपित कर,
प्राण कामना का पंक्ति मुख बोकुर
उसको स्वस्थ मुख दे भागव
निध स्वीकृति से नूतन !

तब देखे मानव आत्मा को
पूर्ण कक्षाओं में बह विकसित
बाह्य भीतर के ऐश्वर्यों से आसक्ति
स्वयं प्रकाशित,—

पावनता आनन्द प्रेम खोभा महिमा की
जीवन प्रतिनिधि बन भरणी को
स्वयं बना देगी वह निश्चित !

० ० ०

